# शिक्षाप्रणाली

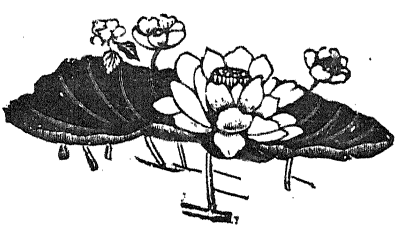

लेखक

देवता स्वरूप

भाई परमानन्दजी एम० ए०

नवजीवन ग्रन्थमाला नं० ८

# शिक्षाप्रणाली

Library No. ...1780...
Date of Receipt....18/14.

लेखक—
देवता स्वरूप भाई परमानन्दजी एम० ए०

प्रकाशक—
दीनानाथ बावादास
लोहारी दरवाजा,
लाहोर ।

प्रथम संस्करण ] श्रावण १९७९ [ मूल्य १) रुपया

प्रकाशक—
दीनानाथ बावादास
नवजीवन पुस्तकालय,
लोहारी दरवाजा, लाहौर ।

# भूमिका।

शिक्षा हमारी जीवन-ज्योति है। इस ज्योतिको जिस भावसे, जिस ढंगसे अथवा जिस सिद्धान्तके अनुसार हम जगाते हैं, हमारी वैसी ही सिद्धि होती है, वैसा ही वर हम प्राप्त करते हैं और वैसा ही सुखमय अथवा दुःखमय फल हमें प्राप्त होता है। इसी शिक्षा द्वारा हम इस मर्त्य-भूमिपर रहते हुए भी देवत्व प्राप्त कर सकते हैं, उच्चाति-उच्च बन सकते हैं अथवा अधःपतित अवस्थाको प्राप्तकर परतन्त्रताकी— गुलामीकी भयानक बेड़ीमें जकड़ दिये जा सकते हैं। जिस तरह इस शिक्षाके द्वारा हमारा जीवन सुधर सकता है। उसी तरह विपरीत सिद्धान्त रहनेके कारण, हमारा जीवन बिगड़ भी सकता है, और जीवन-संग्राममें हम पराजित और पद-दलित भी पाये जा सकते हैं। प्रमाणके लिये यह अभागा भारत ही तय्यार है। जिस समय यहाँकी शिक्षा सर्व्वोच्च स्थान प्राप्त कर रही थी— जिस समय यहाँकी शिक्षा-प्रणाली जगतके लिये आदर्श बन रही थी, उस समय यहाँ सुख-समृद्धिकी सरिता बहा करती थी। धन-धान्यसे देश परिपूर्ण हो रहा था, ज्ञान-गरिमामें इस देशकी कोई टक्कर नहीं कर सकता था, यहाँतक कि देवता भी इसे धन्य कहते हुए, भारतमें जन्म ग्रहण करनेके लिये लालायित रहते थे। सभी विषयोंमें, सभी बातोंमें, और सब प्रणालियोंमें—भारत ही आदर्श था। परन्तु समयके फेरसे वह सब गया। भारतीय शिक्षा-प्रणाली एक विशाल आवर्त्तनमें पड़कर नष्ट-भ्रष्ट हुई—उसके बदले—उस ज्ञान-चक्षुको खोलनेवाली अतुलनीया शिक्षा-प्रणालीके परिवर्त्तनमें परतन्त्रता प्रसविनी, भौतिक सुखका सब्ज़-बाग दिखानेवाली, पर आत्माके

विकासको संकुचित करनेवाली, एक नवीन शिक्षा-प्रणाली भारतके सम्मुख रखी गयी। विदेशी प्रभावोंसे, आक्रमणोंसे घबड़ाये भारतने उसे जी खोलकर अपनाया। परिणाम यह हुआ, कि वह अपना ज्ञान विकासका पथ तो अवश्य खो बैठा, प गुलामी करनेकी रीति उसे अच्छी तरह आ गयी—पेट-पालनेके लिये वह एक नया ही ढंग सीख गया।

देशपर इसका विष विषम रूपसे फैलता देखकर, महात्मा गान्धीने अपने असहयोग कार्य-क्रमके सिद्धान्तके अनुसार गुलामीकी मेशिनरी—इन शिक्षालयों और विद्यालयोंको त्यागने-की घोषणा की। देशके अनेकानेक नवयुवकों और बालकोंने उसे त्यागा भी पर डटे न रह सके—यह घोषणा आंशिक रूपसे सफल होनेपर भी, अधिकांश असफल हुई। यही देखकर परम देशभक्त, अद्भुत त्यागी और विचार-शील भाई परमानन्द-जीने, हमारी शिक्षा-प्रणाली निर्दिष्ट करनेके लिये, यह पुस्तक प्रणयन की है। पुस्तक विचार-पूर्ण रीतिसे लिखी गयी है। कितने ही विषयोंपर प्रकाश डाला गया है—आशा है, इससे पाठक और सर्व-साधारण कुछ न कुछ लाभ उठानेकी चेष्टा करेंगे।

भवदीय—

चन्द्रशेखर पाठक।

# शिक्षा-प्रणाली।

(१)

महात्मागांधीके "नानकोपरेशन प्रोग्राम" से हमारी शिक्षा-प्रणाली फिर नये प्रकारसे हमारे सामने उपस्थित हुई है। इस विषयपर मैं भी अपनी राय रखता हूं। इसलिए मैंने उचित समझा है कि मैं अपने विचारोंको पाठकोंके सम्मुख प्रस्तुत करूं।

महात्मा गांधीने एक विशेष उद्देश्यको सामने रखकर सरकारी शिक्षा-प्रणाली और इसके साथ सम्बन्ध रखनेवाली सारी संस्थाओंका बायकाट करनेका विचार किया है। उनका पहलू बिलकुल पोलिटिकल है। वह इसे शिक्षाकी दृष्टिसे पेश नहीं करते। मैं केवल शिक्षाकी दृष्टिसे ही विचार करूंगा।

सबसे पहिले एक मत यह प्रस्तुत किया जाता है कि जब तक जातीय गवर्नमेंट न हो, जातीय शिक्षा-प्रणालीका प्रचार करना असम्भव बात है। इसलिए यह विषय ध्यान देनेके योग्य ही नहीं हो सकता। एक तरह शायद ऐसा कहना ठीक हो परन्तु सर्वथा यह कहना युक्तिसंगत नहीं है। इस तरह देखनेसे देशकी शारीरिक अवस्था पूरी स्थिर नहीं की जा सकती। यदि गवर्नमेंट अपनी न हो तो भी स्वदेशी इन्डस्ट्री (कलाकौशल) के लिए यत्न करना हमारा कर्तव्य है। सामाजिक अवस्था भी विना पोलिटिकल शक्तिके स्थिर नहीं की जा सकती फिर भी सामाजिक सुधार आवश्यक कर्तव्य है।

गवर्नमेंट अपने हाथमें होनेके विना किसी पोलिटिकल लाभका होना सम्भव नहीं है। तब भी पोलिटिकल सुधार करनेका यत्न किया जाता है।

बड़ा आक्षेप यह है कि हमारे देशमें हिन्दू, मुसलमान, और सिक्ख तीन बड़े धार्मिक संप्रदाय हैं। जातीय ढंग वही कहला सकता है जिसमें तीनों संप्रदायोंके विद्यार्थी समानताके साथ शिक्षा प्राप्त करें। ऐसा तो वर्तमान शिक्षाप्रणालीके अन्दर होता है। जितने सरकारी शिक्षणालय हैं वे इस बुराईसे दूर हैं। यदि हमारी शिक्षाप्रणालीमें केवल यही शर्त आवश्यक हो तब तो सरकारी शिक्षा बिलकुल ठीक और पूर्ण है, परन्तु बात यह है कि यह अकेली शर्त शिक्षा-विषयमें इतनाही मूल्य रखती है जितना कि हमारी वर्तमान पोलिटिकल दशामें देशसम्बन्धी अधिकारोंकी समानता। क्योंकि पोलिटिकल दृष्टिसे हिन्दू, मुसलमान और सिक्ख वर्तमान शासनके सामने एक हैं। क्या इसके ये अर्थ होंगे कि किसी पोलिटिकल संशोधन वा परिवर्त्तनकी आवश्यकता ही नहीं रही? जिन अवस्थाओंमें हमें काम करना है उनको दृष्टिमें रखकर न तो यह कहा जा सकता है कि विना अपनी गवर्नमेंटके शिक्षा–प्रणालीका ठीक होना असम्भव है और न यह ही कहा जा सकता है कि विना शिक्षा-प्रणाली या इंडस्ट्रियल (कलाकौशल्य) लाइनको ठीक किये गवर्नमेंट प्राप्त करना असम्भव है। दोनों एक दूसरेपर आश्रित हैं, एक दूसरेकी सहायता करते हैं। यदि हमारा पोलिटिकल अधिकार हो तो हम

शिक्षाप्रणालीको जल्दी ही ठीक कर सकते हैं। यदि हमारी शिक्षा-प्रणाली ठीक हो जाय तो हमें पोलिटिकल शक्ति प्राप्त करनेमें सहायता मिलती है। इसलिए मैं निम्न बातें विचारके लिए प्रस्तुत करता हूं:—

(१) वर्तमान शिक्षा-प्रणाली किन उद्देश्योंको सामने रखकर आरम्भ की गई है?

(२) क्या यह हमारे लिए स्वाभाविक शिक्षा-प्रणाली है?

(३) कहांतक यह हमारे लिये लाभदायक सिद्ध हुई है?

(४) इसमें कौनसा बड़ा दोष है?

(५) हमारी यूनिवर्सिटी कैसी हो?

जब एक जाति दूसरीपर अधिकार जमा लेती है तो उसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि जैसे भी हो सके नीचे दबी हुई जातिके दिलोंको (अपने वश) में करे। महाभारतमें भी लिखा है कि राजाके ६ किलोंमेंसे प्रजाके दिलपर अधिकार करना सबसे अधिक दृढ़ किला है। विजय लड़ाईसे प्राप्त होती है। लड़ाईके समय दो जातियें एक दूसरेका जानी दुश्मन हो जाती हैं। दोनोंमेंसे प्रत्येक दूसरीको विनाश करनेके लिए कोई उपाय शेष नहीं छोड़ती। विजय हो जानेसे एक दो पीढ़ी बाद वह शत्रुता दिलोंमें रहती है। इस समय जीतनेवाली जातिको ओरसे ऐसे उपाय अवलम्बन किये जाते हैं जिनसे हारी हुई जातिके अन्दरसे वह शत्रुता दूर हो जाय और घृणाके स्थानमें प्रेमका भाव पैदा हो। इसे राजनीति ( पालिटिक्स ) में राज्यको स्थिर

करना या (Consolidation) कहा जाता है। इसके बिना कोई राज्य चिरस्थायी नहीं हो सकता और शासकोंको सदा अपने अस्तित्वका भय रहता है। महाराजा रणजीतसिंहने बड़ा प्रान्त जीत लिया था परन्तु लोग अभी अधीन नहीं हुए थे कि दूसरी जाति आगयी और इसने आते ही अपने पैर जमाने शुरू कर दिए। साधारण लोगोंकी दृष्टिमें रणजीतसिंह या इसके उत्तराधिकारी राजाओंके बीच कोई भेद मालूम न होता था। (Consolidation) या दिलोंको अधीन करनेके अर्थ यह हैं कि पराजित जाति भी उन उद्देश्योंको प्रेम करने लगे जिनसे कि जीतनेवाली जातिके लोग संयुक्त हैं। इसके लिए इस जातिके बच्चोंको ऐसी शिक्षा देनेका प्रबन्ध किया जाता है जिससे कि इन बच्चोंके दिलोंमें जीतनेवाली जातिकी सभ्यता घर कर जाय। इस नयी सभ्यताका नाम "वर्तमानकाल" "उन्नतिका काल" या रोशनीका ज़माना कुछ ही हो सकता है परन्तु अभिप्राय सबका एक ही है। वह यह कि इसका पराजित जातिकी सभ्यतासे युद्ध होता है। यदि इस युद्धमें पराजित जातिकी सभ्यता हार खाकर छुप जाय तो इसके अर्थ स्पष्ट हैं कि वह देश सदाके लिए विजेता जातिके हाथ आगया और पुरानी जातिका अस्तित्व मिट गया। मिस्र, ईरान, और अफ़गानिस्तानका इस्लामके नीचे यह हाल हुआ। अरब जातिका भी पहले पहल यही विचार था कि यूरोपकी सारी जातियोंको अरबी सभ्यताका प्रेमी बनाकर उनकी जातीयताको दबावे। जब तलवारके युद्धमें इस्लामको

कृतकार्यता न हुई तो उसने अपनी सभ्यताकी बुनियाद दूसरी तरह रखनी शुरू की। योरपमें सबसे पहली यूनिवर्सिटी परिस या आक्सफ़ोर्डकी न थी प्रत्युत "कारडोवा" की थी जिसे कि अरबके लोगोंने स्पेनमें स्थापित किया था। इस यूनिवर्सिटीमें चिकित्साविद्या, फ़िलासफ़ी, हिन्दसा आदि सब विद्याएं सिखाई जाती थीं। आश्चर्यका विषय है कि यूरोपकी जातियोंमें यूनानकी फ़िलासफ़ी, दर्शन और चिकित्साविद्या, अरबी भाषाके द्वारा फैली। सात सौ सालतक अरबोंका शासन स्पेनमें रहा। अरबी सभ्यताने एशियामें कदम जमाए परन्तु योरप इसके मुकाबिलेमें डटा रहा और ७०० सालके बाद अरबोंको योरप छोड़ना पड़ा।

पिछली शताब्दीके मध्यसे पहिले ही जब ब्रिटिश कम्पनीका राज्य भारत जैसे सुविशाल देशमें फैल गया तो उनके सामने यह गहरा प्रश्न उपस्थित हुआ कि किस प्रकारसे अपने राज्यको यहां स्थिर करें। स्वाभाविक तौरपर वे अपने साहित्य और सभ्यताको देशी सभ्यतासे बहुत ऊंचा समझते थे। मेकाले जैसे ऊंचे दिमाग़के आदमीकी दृष्टिमें आर्य जातिके सम्पूर्ण साहित्यकी दो कौड़ी कीमत न थी। इसलिए उन्होंने निर्णय किया कि वे अपनी भाषा, अपना साहित्य और अपनी सभ्यताका शिक्षा द्वारा भारतमें प्रचार करें। अपनी सत्ताके लिए, अपने लाभके लिए, और अपने चिरस्थायी होनेके लिए यह इनके लिए आवश्यक था। जिनको ईश्वर सामर्थ्य देता है उनको साथ बुद्धि भी देता है।

यदि अंग्रेज राजनीतिज्ञ ऐसा न करते तो वे गंवार कहलानेके योग्य होते लेकिन उन्हें एक बड़ा संशय था कि यह देश बड़ा विस्तृत था, जनसंख्या अधिक थी। इस देशमें इस्लाम कृतकार्य न हुआ था। उसे यह डर था कि उसकी परीक्षा कहीं असफल न हो जाय। आयर्लैंडमें इस परीक्षणको पूरी कृतकार्यता हो गयी आयरिश भाषा सिवाय दूर दूरके कोनोंके सर्वथा नष्टप्राय हो गयी थी। आयरिश चर्च भी दबा रहा। उसकी सभ्यता और भाषा भी अंग्रेज़ी हो गई। परन्तु आयर्लैंड एक छोटासा देश था, इसकी जनसंख्या बहुत थोड़ी थी और उनके नस्ल और रंग आदिके भेद भी इतने अधिक न थे जितने कि भारतीयोंके साथ थे। परिणाम कुछ ही हो, यह परीक्षण अत्यन्त विस्तृत रूपमें शुरू कर दिया गया।

अब महात्मा गांधीके प्रचारसे मालूम हुआ है कि इस परीक्षणमें सन्देह भी है। विद्यार्थी या उनके मातापिता स्कूलों और कालिजोंका बायकाट करें वा न करें परन्तु देशके बड़े हिस्सेमें एक लहर पैदा हो गयी है जिसने कि इस परीक्षणको दुधारी तलवार सा बना दिया है और अब यह स री तरफ़से काटने लग गयी है।

अंग्रेज़ नीतिज्ञोंने पुराने अरबी तरीक़ेकी नक़लको श्रेष्ठता दी। इनका राज्य अधिक स्थिर होता यदि ये उस अनपढ़ परन्तु अद्वितीय दिमाग़ी शक्ति रखने वाले मुग़ल अकबरका उदाहरण सामने रखते। अरबोंके ढंगसे अकबरका ढंग बिलकुल निराला था। इससे पहिले मुस्लिम राज्य पृथ्वीतलसे भी ऊपर था।

देहली और इसके चारों ओरके इलाकेसे परे मुस्लिम राज्यकी कोई स्थिति न थी। परन्तु अकबरने दूसरे ढंगसे जनताके दिलोंपर अधिकार करना आरम्भ किया। लोगोंके धर्मका अध्ययन करके, उनकी सभ्यताको प्यार करके, और अपने आपको उनके रीतिरिवाजके साथ सम्मिलित करके अकबरने अपने शासनकालमें मुस्लिम राज्यको स्थिर किया। और यदि औरंगजेब भी उसी नीतिपर चलता तो इस देशकी प्रजा पोलिटिकल पहलूमें अद्वितीयता प्राप्त कर लेती। अकबरकी नीति दूसरी जातिका दिल अधीन करनेके लिए विशेष सामर्थ्य रखती है। अंग्रेज़ नीतिज्ञ भी ऐसा करते थे। इनका अपराध नहीं। इस देशकी पुरानी सभ्यता और ज्ञान इस कालमें जीर्ण दशामें थे। नया साहित्य कम पैदा होता था। उनका यही विचार था कि वह सभ्यता मर चुकी थी और जातिको अपनी विद्या, आचरण, और सभ्यताका कुछ पक्षपात न था।

दूसरा प्रश्न यह है कि क्या यह ढंग हमारे लिये स्वाभाविक है?—स्वाभाविक ढंग उस दशामें होता है जब कि एक जाति स्वयं उसे अपने लिए स्थिर करती है। इसमें जातिका अपना अधिकार होता है कि वह अपने बच्चोंकी शिक्षाके लिए विशेष आदर्श नियत करे और उसके अनुसार उन्हें तैय्यार करे।

एक समय था जब कि जापानको ज़रूरत हुई कि अपने बच्चोंके दिलोंमें देशभक्तिकी अग्नि प्रज्ज्वलित करे। स्कूलोंमें गीतोंके द्वारा, पुस्तकों तथा व्याख्यानोंके द्वारा केवल एक ही

भाव उत्पन्न किया गया। बच्चोंको दुनियामें युद्धके लिए तैय्यार करनेका उद्देश्य था। इसके लिए उन्हें विशेष व्यायाम कराया जाता था, विशेष प्रकारके कष्टोंमें गुजारा जाता था जिससे समयपर देशके काम आसकें। इस शिक्षाप्रणालीका प्रभाव रूसके साथ युद्धमें प्रकट हुआ। जो कुर्बानी, जो त्याग जापानी नवयुवकोंने देशके प्रेममें दिखलाया, और जिस उपेक्षा (लापरवाही) से उन्होंने अपनी जानें देशके लिए अर्पण कीं, दुनियाके इतिहासमें एक अनुपम परिच्छेदका दर्ज़ा रखती हैं। एक रूसी जहाज़को डुबोनेके लिए आवश्यकता थी कि २७ नौजवान १ किश्ती लेकर जायं और जहाज़को डुबो दें परन्तु साथ ही किश्तीका डूब जाना भी अनिवार्य्य था। घोषणाकी गयी, सैकड़ों जापानी बच्चोंने अपने आपको भेंट किया। बहुतेरे प्रार्थनापत्र ख़ूनके साथ लिखे हुए थे। कोई शिक्षा स्वाभाविक नहीं कहला सकती जो कि एक दूसरी भाषामें दी जाती है। शिक्षाका अर्थ कुछ पुस्तकें पढ़नेके योग्य होना नहीं है। शिक्षाका असली उद्देश्य यह है कि बच्चेके दिल और दिमाग़का उच्च विचारोंके अन्दर पालना हो। जब इन विचारोंको एक दुर्ब्बोध वेशमें डालकर कठिन बना दिया जाता है तो उनका प्रभाव दिल या दिमागपर कैसे पड़ सकता है। उनका आनन्द तो उनकी समझनेकी कठिनता बिलकुल दूर कर देती है। विशेषतः पञ्जाबमें बच्चोंको पंजाबीके स्थानमें कठिन हिन्दी वा उर्दूमें शिक्षा आरम्भ कराना इनके लिए स्कूल जाना दूभर बना देता है। इंग्लैंड शिक्षासे सर्वथा शून्य था।

कोई पुस्तक अंग्रेज़ी भाषामें न थी। केवल पादरी लोग ही लिखना पढ़ना जानते थे। और वह सब लैटिन भाषामें था। वहांके प्रसिद्ध बादशाह 'ऐलफ्रैड दी ग्रेट' को अपनी प्रजाके अन्दर शिक्षा फैलानेका विचार आया। उसने आवश्यक समझा कि स्वयं उन पुस्तकोंका लैटिनसे अंग्रेज़ीमें उल्था करे ताकि इङ्गलैंडके लोग विद्या प्राप्त कर सकें। क्या परिणाम होता यदि इसकी जगह वह सब अंग्रेज़ बच्चोंके लिए लैटिन भाषामें सीखना आवश्यक बना देता? हमारे बच्चोंकी शिक्षाकी ओर ध्यान दें और हिसाब लगावें तो मालूम होगा कि इनके विद्यार्थी जीवनका आधा समय एक भाषाके सीखनेमें जाता है और शेषका बहुत सा भाग इसी भाषामें दूसरे विषयोंपर लिखी पुस्तकें पढ़नेमें जाता है। उन्हें चिरकाल तक इन विषयोंकी समझ नहीं आती और न इनमें कोई अनुराग ही पैदा होता है। इसका परिणाम यह होता है कि हमारे नवयुवक कैमिस्ट्री (रसायन शास्त्र)में मास्टरकी डिग्री प्राप्त कर लेते हैं परन्तु उन्हें कैमिस्ट्रीका कुछ भी ज्ञान नहीं होता। इतिहासमें एम० ए० कर लेते हैं और अपने देशके इतिहासका कुछ पता नहीं होता। डिग्री केवल अक्षर जोड़नेके उद्देश्यसे प्राप्त की जाती है। अन्यथा यदि विद्याके प्रेमसे प्राप्त की जाय तो क्यों ऐसा हो जो हम देखते हैं। एक नवयुवक गणित वा साइंसमें तो एम० ए० बनता है फिर कानूनमें प्रविष्ट हो जाता है, फिर वही स्कूलमें अंग्रेज़ी पढ़ानेपर नियुक्त हो जाता है। दूसरी भाषा सीखनेमें कोई दोष नहीं।

दूसरे देशोंमेंभी बच्चोंको एकाध विदेशी भाषा सिखाई जाती है परन्तु उनकी शिक्षा उनकी अपनी मातृभाषामें ही होती है। जब उन्हें अपनी मातृभाषामें पूर्णता प्राप्त होती है वे दूसरी भाषाको बहुत थोड़ा समय देकर सीख लेते हैं।

हमारे लिये अब प्रश्न है कि सारे देशकी कौनसी एक सामान्य भाषा हो? हिन्दमें हिन्दी, बङ्गाली, गुजराती, मराठी और तामिल आदि भाषाएं भिन्न भिन्न प्रान्तोंमें बोली जाती हैं। इन सबमें हिन्दी एक ऐसी भाषा है जो कि लगभग आधी आबादीमें बोली जाती है और बहुत सी देशी रियासतोंकी भाषा भी हिन्दी है इसलिये जहांतक उच्च शिक्षाका सम्बन्ध है वह सब सूबोंमें एक सामान्य भाषामें होनी चाहिये और सब स्कूलोंकी शिक्षा, और सर्वप्रिय साहित्य जैसे उपन्यास, इतिहास या गीत और समाचारपत्र आदि प्रान्तकी अपनी भाषामें हो सकते हैं। जो उच्च विषयोंपर पुस्तकें लिखी जायं वे एक भाषामें हों हिन्दी और हिन्दुस्तानी एक ही भाषा है। हिन्दके मुसलमान प्रसन्नतासे स्वीकार कर लेंगे यदि हम लिखनेमें एक देवनागरी अक्षरोंके स्थानमें देवनागरी या उर्दूका प्रचार प्रारम्भ करें। वे ही पुस्तकें दोनों अक्षरोंमें छपाई जा सकती ह। व्याख्यान एक ही भाषामें होंगे। शाहजहांने कदाचित् इसी उद्देश्यसे उर्दूको आविष्कृत किया था कि यह देशकी सामान्य भाषाके तौरपर काम आ सके। क्या अच्छा होता यदि बृटिश गवर्नमेण्ट भी कोई ऐसा उपाय निकालती। मद्रासके किसी भागमें जायं, बंगालके किसी

भागमें जायं वहांकी मुस्लिम जनता हिन्दुस्तानी बोलना जानती है। यदि मुसलमान सब जगह इसे जानते हैं तो हिन्दुओंका पहिला देशसम्बन्धी कर्त्तव्य है कि हिन्दुस्तानीका ज्ञान प्राप्त करें। कालेपानीमें जाकर इस प्रश्नका हल स्पष्ट मिल जाता है। वहांपर मद्रास, बंगाल, बम्बई और बर्मा आदिके कैदी भेजे जाते हैं। वहाँकी बोलचाल एक ही भाषा हिन्दुस्तानीमें होती है। थोड़े समयमें सब लोग सीख लेते हैं।

तीसरा प्रश्न यह है कि किस दर्जेतक यह प्रणाली हमारे लिये लाभदायक सद्ध हुई है? कहा जाता है कि इससे अधिक और क्या लाभ हो कि जितने धार्मिक काम करनेवाले, पोलिटिकल या सामाजिक संशोधनकी नींव डालनेवाले हैं वे सबके सब शिक्षित समाजसे आते हैं। यहांतक कि इस शिक्षा-प्रणालीके समाचोलक भी तो शिक्षाके प्रभावसे पैदा होते हैं। इस बातसे इन्कार करना तो व्यर्थ है कि वर्त्तमान शिक्षा प्राप्त किये हुए लोग कई बातोंमें अनपढ़ोंसे कई गुना अच्छे हैं। यदि एकने १५ वर्ष शिक्षा प्राप्त करनेपर व्यय किये हैं तो इसका नष्ट हुआ समय निकालकर भी बहुतेरा समय रह जाता है जिसमें कि उसने कुछ न कुछ सीखा। परन्तु जो कुछ वह सीखता है उसके मुकाबिलेपर उस व्यक्ति और उस जातिको बहुत भारी मूल्य देना पड़ता है और जो असली उद्देश्य शिक्षाका है कि इसके द्वारा हर विद्यामें पूरे विद्वान पैदा हों वह सर्वथा पूरा नहीं होता। हरएक प्रान्तमें संस्थापित की हुई यूनिवर्सिटियोंमें विद्यार्थियोंकी

बीसियों नस्लें गुजर चुकी हैं परन्तु अभीतक न कोई सच्चा इतिहासलेखक पैदा हुआ, न दार्शनिक और न विज्ञानवेत्ता जो एक दो नाम प्रस्तुत किये जा सकते हैं वे विदेशमें जाकर शिक्षा प्राप्त करके इस दर्जेतक पहुंचे हैं।

यहां शिक्षा रोटी कमानेका एक साधन समझी जाती है और वह भी सरकारपर निर्भर होकर। प्रारम्भसे ही इनका यही उद्देश्य रहा और यदि वास्तवमें देखा जाय तो रोटी कमानेके योग्य बनाने वाली टैक्निकल या कैमिकल शिक्षा कहीं नहीं दी जाती और न इसको क्रियात्मक रूपमें कृतकार्य बनानेका कभी कोई विचार ही पैदा हुआ है। यह विचार कि इस प्रणालीके विरोधी भी इससे ही पैदा हुए हैं यह ऐसी युक्ति नहीं जिसे इसके पक्षमें दिया जा सके। मिशनस्कूलमें शिक्षा दी जाती है, बाइबिल पढ़ाई जाती है। यदि वहां कोई लड़का पढ़कर ईसाई मत या बाइबिलका विरोधी हो जाता है तो इसका श्रेय स्कूलको नहीं दिया जाता प्रत्युत दूसरे कारण हैं। इसकी अपनी बुद्धि है, इसका अपना जातीय प्रेम है जो विरोधी शिक्षाके होते हुए भी ऐसे पवित्र भावको इसके अन्दर पैदा करता है। यदि शिक्षासे धर्मका संशोधन होता तो स्वामी दयानन्दसे पहिले शिक्षित लोग आर्य-समाजी हो गए होते। यह तो स्वामीके प्रचार या उसके प्रबल विचारोंका परिणाम है कि इसका धार्मिक आन्दोलन फैलता है। यदि यही विचार उस पुरुषके पास पंहुचाए जाते हैं जो गांवमें रहता है और इस शिक्षासे प्रभावित नहीं हुआ है तो

साधारणतया वह इसको अधिक दृढ़तासे और अधिक श्रद्धासे पकड़ता है। पोलिटिकल तौरपर वर्तमान शिक्षा प्राप्त किए हुए लोगोंका अंग्रेज़ी गवर्नमेंटके साथ अधिक सम्बन्ध है क्योंकि उनका अपना स्वार्थ और प्रतिष्ठा इस शिक्षापर ही आश्रित है। जैसे एक व्यक्ति बैंकमें अपना माल जमा करके उसकी रक्षा अपना कर्तव्य समझता है ऐसे ही शिक्षित समाजने अपना सब माल गवर्नमेंटके बैंकमें जमा करा रक्खा है।

चौथा प्रश्न यह है कि इस प्रणालीमें सबसे बड़ा दोष क्या है? सबसे बड़ा दोष तो यह है कि इसी शिक्षाने हमारे नौजवानोंके आचरणको खोखला बना दिया है। यह शिक्षा हमें केवल नकल करना सिखाती है। जैसे इसकी छायामें रह कर हमारा बाह्य रूप एक नक़ल सा दिखायी देता है वैसे ही हमारे दिल वा दिमाग़में नकली विचार भरे रहते हैं। हमारी शिक्षाका सार पाश्चात्य है। हम भी पाश्चात्य सभ्यताके अनुरागी बनकर इसे अपने अन्दर इसी तरह विलीन करना चाहते हैं जिस तरह कौएने पर चिपका कर मोर बननेका प्रयत्न किया था।

हम पाश्चात्य सभ्यताकी बुराइयोंकी नक़ल करते हुए अपनी सभ्यताकी अच्छाइयोंको जवाब देते जाते हैं। यह ठीक है कि जहां कहीं कोई अच्छाई पाई जाती हो उसे हम अपने अन्दर लेलें परन्तु लेने लेनेमें अन्तर है। एक लेनेका ढंग है जिसमें इस अच्छाईको लेकर अपने अन्दर विलीन करें जैसा कि जापानने किया या चीन आजकल कर रहा है। और दूसरा लेना यह है

कि हम किसी पाश्चात्य आदतको स्वीकार करके अपनी जातीयताको बिगाड़ें और अपने आपको दुर्दशाग्रस्त कर लें। यदि एक व्यक्ति पौष्टिक भोजन खाकर उसे व्यायाम करके पचा लेता है वह अपना शरीर मज़बूत करता है, लेकिन बहुतसा गोश्त पेटके साथ बांधलेनेसे आदमी हृष्ट पुष्ट नहीं बनता। इसके अतिरिक्त इस शिक्षा-प्रणालीमें परीक्षा और उनकी अधिकता हमारे नौजवानोंके जीवन और दिमाग़का नाश कर रहे हैं। गांवके प्राईमरी स्कूलोंसे लेकर डिग्री लेनेतक कितनी परीक्षाओंमेंसे गुज़रना पड़ता है। वार्षिक, षणमासिक और त्रैमासिक परीक्षा...एक एक परीक्षा जिनपर कि विद्यार्थीकी उन्नति या वर्षभरका जीवन आश्रित है भयंकर मृत्युका स्वरूप होती है। यदि विद्यार्थीके प्रश्न निकालनेमें थोड़ी सी अशुद्धि है तो इसका साल जीवनसे पृथक् कर दो। यह क्यों? अशुद्धि हो गयी तो क्या हुआ? वह सालभर स्कूल जाता रहा है, फ़ीस देता रहा है। यदि इसका दिमाग़ कमज़ोर रहा है, इसकी स्मरणशक्ति कुछ न्यून है तो इसका क्या दोष? प्रकृति हीने इसे ऐसा बनाया है। फेल (अनुत्तीर्ण) कर देनेसे इसका दिमाग़ ज्यादा ख़राब होगा तथा इसमें कोई उन्नति न होगी। सालमें कई बार जाकर इन्स्पेक्टर बच्चोंके दिलमें इतना डर और रोब पैदा करते हैं कि उनके दिमाग़में दासताकी जड़ स्थिर हो जाती है। माताओंके दिलोंमें परीक्षाकी चिन्ता जम जाती है। फिर हिसाब लगाकर देखें कि हमारे बच्चोंके जीवनके कितने साल नष्ट होते हैं और इनके लिए विपत्ति पैदा

करते हैं। तीसरी प्राईमरीके लाखों बच्चे फ़ेल होते हैं, लाखों पांचवींकी परीक्षामें, हज़ारों आठवींकी परीक्षामें, हज़ारों ऐंट्रेंसमें, सैकड़ों एफ० ए० और बी० ए० में। यह वध ( कतल ) प्रति वष होता है। लड़केके लिए फ़ेल होना वर्षभर जेलकी यंत्रणा है। मातापिताके सिरपर एक और सालका ख़र्च! यह सब किस लिए?—अमरीका और यूरोपके देशोंमें यदि लड़के निर्बल हों तो उनके अध्यापकोंको दण्ड दिया जाता है। लड़केका साल नष्ट करनेका कोई अधिकार नहीं रखता। यदि ऐसा हो तो लड़केके मातापिता अध्यापकपर हर्जानेकी नालिश कर दें। वहां इन्स्पेक्टर स्कूलोंको देखते हैं परन्तु केवल इसलिए कि सामान ठीक है, खेलोंका प्रबन्ध ठीक है, अध्यापक पर्याप्त योग्यता वाले हैं इत्यादि। लड़कोंका सम्बन्ध केवल अध्यापकोंसे होता है। मुख्याध्यापकका प्रमाणपत्र स्कूलकी शिक्षा समाप्त करनेका प्रमाण है। केवल इसी प्रमाणपत्रके आधारपर उम्मीदवार यूनिवर्सिटीमें प्रविष्ट किये जाते हैं। यूनिवर्सिटीमें ३, या ४ साल रहना डिग्रीके लिये पर्याप्त है। क्या इससे यह परिणाम नहीं निकलता कि हमारी परीक्षायें हमारे बच्चोंके दिमाग निर्बल करनेके लिए इस कालमें पायी जाती हैं। सभ्य संसार परीक्षायें उड़ा देना चाहता है।

---

# हमारी यूनिवर्सिटी कैसी हो ?

यूनिवर्सिटीके लिए कई कालिजोंका होना आवश्यक नहीं है। अमरीकामें हर एक कालिज यूनिवर्सिटीका पद रखता है। इसमें सब विभाग (फैकल्टी) होते हैं जिनमें वह उपाधियां देता है। परन्तु यूनिवर्सिटी स्थापित करना सुगम काम नहीं है। बहुतसे साधन होने चाहिए। कमेटी हो जो रुपया एकत्रित करे और जिनपर लोगोंका विश्वास हो। यदि एक दो व्यक्ति दूसरा काम करने वाले इसमें लग जावेंगे तो उनकी सारी कार्यशक्ति इसमें व्यय हो जायगी।

प्रथम तो अपनी यूनिवर्सिटीमें शिक्षाका माध्यम अपनी भाषा हो। आक्षेप होगा कोई पुस्तक नहीं, क्या पढ़ाया जावेगा ? यह तो 'गाड़ीको घोड़ेके आगे जोड़ने' वाली कहावत है। पुस्तकें पहिले नहीं होंगी। शिक्षा इस भाषामें होगी तो पुस्तकें स्वयं बन जावेंगी। जो प्रोफेसर होगा वह अपने विषयोंपर लिखे हुए व्याख्यान प्रति दिन देगा। वर्षके बाद इसके व्याख्यानोंकी पुस्तक छप जावेगी। यही ढंग संसारकी सब यूनिवर्सिटियोंमें वर्ता जाता है। यह ढंग सर्वथा बेहूदा है कि प्रोफ़ेसर किसी अपने जैसे या अपनेसे कम योग्यता वाले व्यक्तिकी बनायी हुई पुस्तक पढ़ाता है और इस पढ़ायीकी परीक्षा करने वाला कोई और व्यक्ति होता है जिसने कि लड़कोंको कभी नहीं देखा।

दूसरी आवश्यक बात यह है कि इसमें पास और फ़ेल करने-वाली परीक्षाएं न हों। योंतो प्रोफ़ेसर हर सप्ताहमें अपनी पढ़ाईके विषयमें लेखद्वारा या मौखिक परीक्षा ले सकता है। प्रोफ़ेसर यदि किसी उम्मीदवारको बहुत अनुपस्थित या असावधान पाये तो उसे अपने व्याख्यानोंमें सम्मिलित न करे परन्तु सालभर शिक्षा प्राप्त करनेके बाद फ़ैल कर देना सर्वथा अनुचित है। सबसे उत्तम उपाय जर्मन यूनिवर्सिटियोंमें प्रचलित है। हरएक उम्मीदवार चार साल यूनिवर्सिटीमें रहता है। दो सालतक वह प्रोफ़ेसरोंके व्याख्यान सुनता है फिर वह अपने लिए एक विषयका चुनाव करके उसी प्रोफेसरके निरीक्षणमें एक निबन्ध लिखता है। उसके परिश्रम और योग्यताके अनुसार उसे प्रथम, द्वितीय और तृतीय दर्जेकी पदवी दी जाती है। वे पुस्तकें यूनिव-र्सिटीके यंत्रालय ( छापेखाने ) में छपाई जायं। हमारी भाषामें किसी वर्त्तमान विषयपर कोई पुस्तक नहीं मिलती। दो चार वर्षके अन्दर नया साहित्य पैदा हो जायगा।

आदर्शकी शाखाको पूर्ण बनानेके लिए एक बड़े पुस्तकालयकी अत्यन्त आवश्यकता होगी जिसमें कि सब विद्यार्थियोंको दिन भर स्वाध्याय करना होगा ताकि वह अपना निबन्ध अच्छी प्रकार तैय्यार करें।

तीसरे मेडिकल, इलेक्ट्रिकल, टैक्निकल, और इंडस्ट्रियल केमिस्ट्रीकी शिक्षाके लिए पृथक् २ संस्थाएं हों ताकि इस यूनि-वर्सिटीमें शिक्षा पानेवाले स्वतंत्रतासे अपना निर्वाह कर सकें।

टैक्निकल, इलैक्ट्रिकल, इंडस्ट्रियल कैमिस्ट्रीका पठन-काल (कोर्स) चार चार सालका हो सकता है। आरम्भमें इनका प्रारम्भ करना कठिन है। क्रियात्मक काम सिखानेके लिए बहुत रुपएकी आवश्यकता है। मेडिकल शाखाका प्रबन्ध प्रारम्भमें कर देना उचित है। लड़के शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं, एक कालिज है वह दरवाज़ा बन्द कर देता है। इङ्गलैण्डमें बड़े बड़े शहरोंमें कई कालिज हैं जो विद्यार्थियोंको लेते हैं और डाक्टर बनाते हैं। इसमें अपनी आयुर्वेदिक और हिकमत सिखानेका प्रबन्ध भी साथ ही करना आवश्यक है।

इस यूनिवर्सिटीमें प्रवेशकी शर्तें ये होनी चाहिएं कि उम्मीदवारकी आयु १७, १८ सालसे कम न हो। वह अपने चालचलनके विषयमें दो भले व्यक्तियोंके प्रमाणपत्र ( सर्टिफ़िकेट ) पेश करे और इसने स्कूलकी शिक्षाके विषय समाप्त किए हों अर्थात् उसे भाषा, गणित, भूगोल, इतिहास, और किसी न किसी साइंसका ज्ञान हो। इनकी किसी स्कूलमें या प्राइवेट शिक्षा उसने प्राप्त की हो।

# जातीय महाविद्यालय

## आर

# जातीय शिक्षा

पंजाब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने लाहौरमें कुछ समयसे एक जातीय महाविद्यालय (National College) खोला है। कांग्रेस कमेटीने इसके लिये एक वर्षतकका ख़र्च बजटमें स्वीकार किया है। इस कालेजका प्रबन्ध अर्थात् आर्थिक और प्रबन्ध विषयक उत्तरदायित्व "पंजाब नेशनलबोर्ड आफ़ ऐजुकेशन" के ऊपर है जो कि कांग्रेस कमेटी पंजाबकी एक उपसभा है और जिसके साथ सम्बन्ध रखनेवाले कई और जातीय विद्यालय भी हैं। शिक्षा-विषयक प्रबन्धके लिए एक स्वतन्त्र पंजाब नेशनल कौंसिल आफ़ ऐजुकेशन है जो कि स्वतन्त्र महाविद्यालयकी सीनेटसे समता रखता है। इस शिक्षा-विषयक कौंसिलका यह कर्तव्य है कि वह जातीय महाविद्यालयके लिए नए ढंगके अनुसार एक नई सर्वोत्तम जातीय शिक्षाकी प्रणाली नियत करे और साथ ही जातीय विद्यालयोंके लिए भी शिक्षाकी विधि (Scheme) तय्यार करे और योग्य विद्यार्थियोंको शिक्षाकी उपाधियां दे। जातीय महाविद्यालयमें थोड़ीसी संख्यासे शुरू

होकर विद्यार्थियोंकी संख्यामें लगातार उन्नति होती रही है। इस समय लगभग ७० विद्यार्थी इसमें शिक्षा पा रहे हैं। अगले वर्षके प्रारम्भमें उनकी संख्याके बहुत बढ़ जानेकी आशा की जा सकती है। इस समय महाविद्यालयमें केवल उदार विषयोंपर व्याख्यान दिए जाते हैं जैसे भारतका इतिहास, यूरोपका इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र, फ़िलासफ़ी, संस्कृत, फारसी और हिन्दी। इनके अतिरिक्त इन्डस्ट्रीके लिए चरखा कातना और कपड़ा बुनना सिखलानेका उच्च प्रबन्ध है और सब विद्यार्थियोंके लिए इस कलाका सीखना आवश्यक है। नागपुर कांग्रेसने कालिजोंके बहिष्कारका फैसला किया। विद्यार्थियोंकी पर्याप्त संख्याने हर सूबेमें कांग्रेसकी आज्ञाको सुनना अपना आवश्यक कर्तव्य समझा। विद्यार्थियोंकी सारी संख्यामेंसे देशभक्तिके विचारसे यह चुनी हुई संख्या थी जिनकी अन्तरात्माने देशप्रेमके ऊपर अपनी सांसारिक इच्छाओंका बलिदान कर दिया। इनमेंसे बहुत तो कांग्रेसके अधीन स्वयंसेवककी भांति काम करनेको तय्यार हो गए। उनका एक भाग अपने मातापिताके दबावसे अपनी सांसारिक इच्छाओंका पूरा होना हाथसे जाता हुआ देखकर मुंह छिपाए हुए फिर वहीं लौटकर आगया जहांसे एक बार निकल कर गया था। उनमें एक हिस्सा ऐसा बाकी रह गया जो कि अपने आपको काम करनेके योग्य न पाता था और जिनको लौट जाना आचारकी दृष्टिसे मृत्यु दृष्टिगोचर होता था। वे चाहते थे कि वे उच्च शिक्षा प्राप्त करें। यह समय

उनका शिक्षा प्राप्त करनेका था और वे अपनी विद्याका ज्ञान बढ़ाकर या अधिक आयु और अनुभव प्राप्त करके अपने देशके लिए उपयोगी मेम्बर बनना चाहते थे। कांग्रेस कमेटीने अपने आपको उत्तरदाता समझा कि उनकी शिक्षाका प्रबन्ध करे और उनके लिए 'नेशनल कालिज' की नींव डाली।

यह तो हुआ एक पहलू, उसका एक और दूसरा पहलू भी है। देशमें देशकी भलाई सोचनेवालोंके अन्दर एक प्रबल सम्प्रदाय है जो यह विश्वास रखता है कि सरकारी शिक्षाका उद्देश्य ही नौजवानोंको विजातीय करता है और अंग्रेज़ी भाषा और साहित्यको उन्नति देते हुए हमारी भाषा और साहित्यको कुचल डालता है। यह शिक्षा-प्रणाली इस जातिके लिए प्रकृतिके विरुद्ध है जो कि देश-भाषा और साहित्यको नष्ट कर रही है। इस प्रकारकी शिक्षा थोड़ेसे विभागको तोतेकी तरह कुछ ऊपरकी बातें सिखा देती है। परन्तु शिक्षाको देशमें सर्वव्यापी नहीं बनाती। मैं उन व्यक्तियोंमेंसे हूं जो यह मानते हैं कि हमारी जातीय उन्नतिकी पहिली सीढ़ी हमारे लिए इस शिक्षा-प्रणाली-को जड़से उखाड़कर इसकी जगह जातीय शिक्षाकी प्रणालीको प्रचलित करना होगा। मैं जातीय महाविद्यालयको इस दृष्टिसे देखता हूं कि यह हमारी जातिकी उन्नतिकी सड़कमें पहली मंज़िल होगी। मुझको इस कालिजकी सेवा सौंपी गयी जिसे मैंने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया।

पंजाबकी जनताके सामने मैं यह प्रश्न उपस्थित करना

चाहता हूं कि क्या वह वर्त्तमान यूनिवर्सिटीके साथ सम्बन्धित कालिजोंकी प्रतियोगितापर जो कि हमारे बच्चोंमेंसे जातीयता-के भावको, धर्मके जीवनको और अपनी भाषाके साथ प्रेमको नाश कर रहे हैं। सच्चे अर्थोंमें एक जातीय विश्वविद्यालय स्थापित करनेको तय्यार हैं और इस महान् कार्यको अपने कन्धोंपर उठानेका हौसला रखते हैं? जो पुरुष अपनी आत्मामें 'हां' का उत्तर सुनते हैं वे इस विद्यालयके लिए दान करें और दूसरोंसे दान देने लेनेका काम करें।

## इस विद्यालयकी निम्न विशेषताएं हैं:—

(१) इसमें सब विषयोंपर अपनी भाषामें व्याख्यान दिए जाते हैं जिनको सुनकर सीखनेवालोंमें इस विषयको समझनेकी योग्यता पायी जाती है। विदेशी भाषामें किसी विषयपर व्याख्यान देनेसे सुननेवालेके मस्तिष्कपर दुगुना बोझ पड़ता है। एक तो भाषाके शब्द समझनेका और दूसरा विषयकी ओर ध्यान रखनेका। साधारणतया विद्यार्थियोंके मस्तिष्ककी शक्ति और ध्यान अंग्रेज़ीके हेरफेर और कठिन शब्दोंमें ही समाप्त हो जाता है। इसका कोई भाग विषयके लिए नहीं बचता।

(२) इसके अन्दर व्याख्यान देनेवाले प्रोफ़ेसर स्कूलके विद्यार्थियोंकी तरह इन्हें विशेष पुस्तकें नहीं पढ़ाते प्रत्युत अपने अपने विषयपर विचार कर अपना व्याख्यान देते हैं। यही प्रणाली संसारके सब सभ्य देशोंमें पायी जाती है। इनके व्याख्यानोंकी

संख्या बहुत थोड़ीसी है जिससे कि वे इन्हें तय्यार कर सकें। पढ़ानेवाले अपने अपने विषयमें विशेष योग्यता रखते हैं और इनमेंसे कई अन्य देशोंकी यूनिवर्सिटियोंमें शिक्षा प्राप्त कर आए हैं।

( ३ ) प्रत्येक विषय जैसे इतिहास, राजनीति और अर्थ शास्त्र आदि अपने जातीय और देशीय विचार-दृष्टिसे पढ़ाए जाते हैं जो कि विदेशी लेखकोंकी लिखी हुई पुस्तकोंको अन्धाधुन्ध पढ़ानेवाले अपने सामने नहीं रख सकते।

( ४ ) यूनिवर्सिटीकी सबसे अधिक बुराई परीक्षाओंकी अधिकता और कठोरता है जो कि हमारे नवयुवकोंके जीवनके आनन्दको नष्ट कर रही है। इनके अन्दर न कोई स्वतन्त्र विचार पैदा होने देती है और इस कारणसे न उनमें स्वतन्त्रतासे सोचनेका भाव ही पैदा हो सकता है। जर्मनी और अमरीका आदि देशोंमें परीक्षाओंके अस्तित्वको ही दूर किया जा रहा है। हमारे यहां इनको परमेश्वरके पदपर पहुंचाया जाता है। यहांकी शिक्षाकी दशा विचित्र ही है। पुस्तक कोई लिखता है, पढ़ानेवाला और होता है, उसमें परीक्षा लेनेवाला कोई और होता है, जबकि शेष सारे संसारमें पढ़ानेवाले ही शिष्योंकी परीक्षा लेते हैं। इसलिए जातीय महाविद्यालयमें इस बुराईको सर्वथा बहिष्कार कर देनेका प्रयत्न किया जायगा। इसके स्थानमें प्रोफ़ेसर प्रति महीनेमें श्रेणीमें विद्यार्थियोंके कामकी परीक्षा मौखिक प्रश्नोत्तरसे या वादविवाद या उत्तरपत्र लिखानेसे करेगा और हरएक पढ़नेवालेको विधिपूर्वक अङ्क देता जावेगा।

विद्यार्थीकी अन्तिम सफलतामें इसके वर्षभरके कामका ही अधिक ध्यान रखेगा।

( ५ ) एम० ए० की उपाधिके लिए प्रत्येक विद्यार्थीको दो वर्ष पहिली उपाधि प्राप्त कर लेनेके बाद विधिपूर्वक परिश्रम और गवेषणा करके एक नई पुस्तक ( Thesis ) इसी विषयकी लिखनी होगी जिसके पसन्द आनेपर इसे डिग्री दी जावेगी।

साधारण लोग कभी कभी आक्षेप किया करते हैं कि अपनी भाषामें शिक्षा किस प्रकार दी जा सकती है जब हमारी भाषामें कोई उच्च पुस्तक ही विद्यमान नहीं। यह तो घोड़ेके आगे गाड़ी जोतनेकी उपमा है। उत्तर स्पष्ट है जब शिक्षा अपनी भाषामें दी जावेगी तो इसमें पुस्तकें तत्काल पैदा हो जावेंगी। शताब्दियोंतक विदेशी भाषामें शिक्षा देते रहो जब आवश्यकता ही नहीं पैदा होती तो वह चीज कैसे पैदा होगी?

कई बार यह कहा जाता है कि थोड़ी देरमें हमें स्वराज्य मिल जायगा। ये सब कालेज हमारे हाथमें आ जावेंगे और यह सब प्रबन्ध कर लेंगे। मैं इसको स्वीकार कर लेता हूं कि आज हमको स्वराज्य मिल जाता है। मैं फिर भी यही देखता हूं कि हमें अपनी जातीय शिक्षाकी एक नयी प्रणाली बनानी होगी। जो पद्धति हमारे सामने हैं वह सड़ी हुई और रद्दी है। इसमें जातीयताके विचारका चिह्नतक दिखाई नहीं देता। हमारे शिक्षित समुदायके मस्तिष्ककी रचना ही ऐसी हो गयी है कि वह इससे अच्छा कुछ सोच ही नहीं सकता। इस प्रणालीने

उनके मस्तिष्कमें स्वतन्त्र विचारोंका भाव पैदा ही नहीं होने दिया।

जातीय शिक्षाका प्रश्न तो हमें हल करना ही पड़ेगा चाहे आज करें या देरके बाद। यदि अबसे ही करेंगे तो इससे स्वराज्य निकटतर होता जायगा। इसलिए स्वराज्यको तत्काल चाहने-वालोंसे मेरी अपील है कि वे जातीय महाविद्यालयको अपने वर्त्तमान और भविष्यत्के कार्यका आधार-स्तम्भ समझ कर तन, मन और धनसे इसकी सहायता करें।

# जातीय विश्वविद्यालय बनानेमें

# सहायता करो।

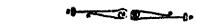

यदि हम इतने सौभाग्यशाली हों कि अंग्रेज़ी सरकार हमपर कृपालु हो जाय, या यदि महात्मा गान्धीके सदाचारके दबावका जादू सरकारपर प्रभाव कर जाय और हमको स्वराज्यका बड़ा भाग मिल जाय तब तो हमारी सारी कठिनाइयां स्वयं ही हल हो जावें। और शायद हमें आप लोगोंसे चन्दे मांग मांग कर किसी शिक्षा-सम्बन्धी संस्थाके बनानेकी आवश्यकता न पड़े। इन वाक्योंमें जो 'यदि' आते हैं इनपर बल देकर पढ़ना चाहिए। सम्भव है ये 'यदि' ऐसे ही रहें और कभी पूरे न हों तब क्या? इस समय हमारी हलचल ज़रा लम्बी हो जायगी। इस हल-चलमें हमारा भरोसा किनपर होगा? पहले तो हम साधारण कालिजोंके विद्यार्थियोंसे अपील किया करते थे। ऐ भारतके सुपूतो! तुम्हारी बूढ़ी माता तुम्हारी ओर दृष्टि डाले तक रही है। आओ! मैदानमें निकलो और इसकी आंखोंमें ठण्डक डालो, इसकी दिलकी आशाओंको पूरा करो।

यह समय तो बड़ा सङ्कटमय था। कांग्रेसने वर्त्तमान कालिजोंके विद्यार्थियोंसे अपील की और इसका जो परिणाम

हुआ हम सबको मालूम है। मेरे दिलमें उन विद्यार्थियोंके लिए गहरा सम्मान और प्रेम है जिन्होंने देशकी आवाज़को सुना ; परन्तु उनकी संख्या क्या है ? मैं इनको रेतके तोदोंमें सोनेके कणोंकी तरह समझता हूं परन्तु अब तो कालिजोंके विद्यार्थी एक ओर हो गए हैं। इनपर देशकी या कांग्रेसकी आवाज़ या नक्कारोंका कोई प्रभाव ही नहीं होता। वर्त्तमान शिक्षाका गिराने-वाला विषैला परिणाम स्पष्ट तौरपर हमारी आंखोंके सामने आ जाता है जब वर्त्तमान अनन्त कालिजोंकी फैक्टरियां विशेष प्रकारके नौजवान हमारे देशमें पैदा कर रही हैं। और यदि ये सब नौजवान अपनी शिक्षाके अनुरागी होनेसे अपनी जातिकी स्वतन्त्रता और उन्नतिमें किसी प्रकारका भाग लेनेवाले नहीं हो सकते तो आगे किस पीढ़ीपर आशाएं होंगी ?

मैं निवेदन करता हूं और इसपर बल देना चाहता हूं कि हमें इन नौजवान विद्यार्थियोंके मुकाबिलेपर देशके साथ स्नेह रखनेवाले और अपनी जाति और देशपर बलिदान होनेवाली सन्तति पैदा करनेकी आवश्यकता होगी जो सबके अन्दर आत्माका काम देगी। वह सन्तति कहांसे पैदा होगी इसके लिये भी कहीं न कहीं तो कारखाना स्थापित करना चाहिए। हमारा जातीय-विश्वविद्यालय इस कारखानेका काम देगा।

निस्सन्देह चित्तमें जोश आता है जिस समय हम अपने अल्पायु नवयुवकोंको स्वयंसेवक बनकर जेलमें जानेके लिये उद्यत पाते हैं। मैं उनकी प्रतिष्ठा करनेमें किसीसे कम नहीं

परन्तु मैं इतना बता देना चाहता हूं कि जब एक योग्यतावाला या ऊँची स्थितिवाला आदमी जेलमें जाता है तो वह देशमें और भाव पैदा करता है और यदि एक जोशीला बच्चा जेलमें कूदनेपर तय्यार होता है तो उसका प्रभाव और होता है। केवल जेलमें जानेका उत्साह रखना भी बड़ी वीरता है परन्तु इसके साथ पहले काम करनेकी शक्ति और सदाचार (Character) उत्पन्न करना इससे कम नहीं। हमारे लिए यह आवश्यक होगा कि हम देशके साथ प्रेम रखनेवाले नौजवानोंको शिक्षा देकर उनकी शक्तियोंको पूरा विकसित होने दें जिससे वे देशके लिये सबसे अच्छा आत्मत्याग कर सकें। इसलिये भी विश्व-विद्यालयका स्थापित होना हमारे लिए आवश्यक है।

वर्त्तमान सरकारी शिक्षाके अन्दर मेडिकल कालिजको लें। दूसरे देश भी हैं जहाँपर मेडिकल साइन्सकी शिक्षा दी जाती है। मैडिकल साइन्स ऐसी विद्या है जिसके सीखनेके लिये भिन्न २ रुचि रखनेवाले विद्यार्थियोंका जी करता है। कोई तो यह विद्या सीख कर ईश्वरीय सृष्टिकी सेवा करना चाहता है, कोई किसी धार्मिक उद्देश्यके साथ मिलकर काम करना चाहता है, कोई नौकरी करने वा रुपया कमानेके उद्देश्यसे सीखता है। किसी जगहपर देखा नहीं जाता कि लड़के इस साइंसको सीखना चाहें और उनको प्रविष्ट करनेसे निषेध कर दिया जाय। सरकारी मेडिकल कालिज लाहौरमें हिन्दू, मुसलमानों और सिक्खोंको इस अनुपातसे लिया जाता है कि मानों उनपर बड़ी

सरकारी कृपा दिखलायी जा रही है। तीन चार सौ हिन्दू प्रार्थी प्रार्थनापत्र लेकर जाते हैं। इनमेंसे केवल ३० को प्रवेश करनेका अधिकार प्राप्त होता है। शेष खुशामदें करते हैं, सिफ़ारिशें ले जाते हैं, हर तरहसे अपने आपको तिरस्कृत करते हैं जिससे वे मेडिकल साइंस सीख ल। इनको साफ़ जवाब मिल जाता है कि तुम्हारे लिए इस विद्याके सीखनेका दरवाज़ा बन्द है। अनुमान लगाओ इस जातिके अपमानका जिसके सैकड़ों बच्चे शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं, अपने पाससे सैकड़ों रुपये ख़र्च करते हैं परन्तु इनको वञ्चित रहना पड़ता है।

लण्डन है, इसमें कई बड़े बड़े अस्पताल है। हरएक बड़ा अस्पताल एक अपना मेडिकल कालिज रखता है। अस्पतालके चिकित्सक डाक्टर साथ साथ प्रोफेसरीका काम करते हैं और लड़के अस्पतालमें काम भी करते हैं, साइंस भी सीखते हैं। इंगलैण्डके दूसरे बड़े शहरोंमें भी अस्पतालोंके साथ मेडिकल कालिज हैं। लड़कोंको कहीं पढ़नेसे रोका नहीं जाता केवल यहांपर ही शिक्षा देना मानों सरकारी तहसीलदारी प्रदान करना है। मैं चाहता हूं यदि कोई ऐसे दानी निकलें जो कि अपने नामसे जातीय विश्वविद्यालयके साथ एक बड़ा जातीय अस्पताल लाहौर शहरमें बनवा दें तो यूनिवर्सिटीके साथ एक जातीय मेडिकल कालेज भी बना दिया जाय। ऐसे डाक्टर हैं जो कि इसे जातीय रीतिपर चलानेको उद्यत हैं। अस्पतालकी पहिली बड़ी आवश्यकता है जो कि पूरी होनी चाहिए

परन्तु पहिले इसके कि मेडिकल कालिज खोला जाय। ऐसे मेडिकल कालिजमें हमारे लिए आवश्यक होगा कि हम पाश्चात्य फ़िज़िआलौजी, सर्जरी, और साइंस एवं कैमिस्ट्रीकी आवश्यक शिक्षा दें। किन्तु जहांतक ओषधियोंका सम्बन्ध है, हम अपनी आयुर्वेदिक प्रणाल और वर्त्तमान पद्धति दोनों सिखलावेंगे जिससे हमारे विद्यार्थियोंको विदित रहे कि इस विज्ञानके आविष्कारक हम ही हैं। इस देशमें यह विज्ञान सबसे पहिले आविष्कार किया गया और यहांसे अरबमें और अरबसे यूरोपियन देशोंमें गया।

प्रान्तकी कांग्रेस कमेटीने इस यूनिवर्सिटीकी बुनियाद रख दी है जैसी कि देशके दूसरे प्रान्तोंमें एक एक स्वतन्त्र यूनिवर्सिटी संस्थापित की जा रही है। हरएक प्रान्तके लोगोंकी देशभक्ति और हिम्मतपर यह बात आश्रित है कि वे कहांतक इस जातीय कामको कृतकार्य बना सकते हैं। यह यूनिवर्सिटी जातीय कामके केन्द्रके रूपमें होगी जहांसे प्रान्तके विविध भागोंके विद्यार्थी प्रकाश प्राप्त करेंगे और इस जलते हुए दीपकको सब स्थानोंपर ले जावेंगे।

---

# पुरानी और नयी कांग्रेस

इस एक सालके अन्दर इंडियन नेशनल कांग्रेसमें एक असाधारण परिवर्तन आ गया है। कलकत्तेकी कांग्रेस हुए सालसे तीन चार महीने अधिक हुए हैं। कलकत्तेकी कांग्रेस पुरानी कांग्रेसका अन्तिम नमूना थी। इस सालकी अहमदाबादकी कांग्रेस देखनेसे यह मालूम होता है कि कांग्रेसकी आत्मा एक नई आत्मा होगई है और इसने एक नया चोला बदल लिया है।

## बाह्य रूप

इससे पहलेकी कांग्रेसके समुदायमें इकट्ठे होनेवाले लोग जब अपने अपने घरोंसे चलनेकी तय्यारी करते थे तो उनका पहला काम बूटों और सूटोंको संवारना होता था। अपना समान अति सुन्दर विलायती चमड़ोंमें बन्द करके ले जाते थे। उनमेंसे कितनेको रेलवेके दूसरे दर्जेसे नीचे यात्रा करना मान-हानि प्रतीत होता था। यात्राके दिनोंमें वहांके निवासके दिनोंमें अंग्रेज़ी वेश पहिने हुए सारी वार्तालाप अंग्रेज़ी भाषामें करनेका प्रयत्न किया जाता था। जो इन चेष्टाओंमें अधिक आगे बढ़ा हुआ होता था वही अधिक प्रतिष्ठाके योग्य था और उसीका प्रभाव दूसरोंपर पड़ता था। कांग्रेसके पंडालके अन्दर और बाहर दफ़्तरों और दरवाजोंके फाटकोंपर सारे फट्टे अंग्रेजीके

मोटे २ शब्दोंमें लिखे हुए दिखाई देते थे । यद्यपि कांग्रेस इस देशकी एक बड़ी भारी राष्ट्रीय सभा थी किन्तु इसके नामको भी अंग्रेज़ी शब्द ही प्रकट करते थे। अहमदाबादकी कांग्रेसमें सारा चित्र पलट गया। हैट और सूटकी जगह खद्दरकी टोपी, धोती और कुरतेने ले ली। अंग्रेज़ीकी जगह स्थान स्थानपर हिन्दी भाषा दिखलाई देने लगी। पंडालके अन्दर सारे मोटोज़ भी हिन्दीमें ही पाए जाते थे। कांग्रेसके सभासदोंको दूसरे दर्जेमें यात्रा करनेमें लज्जा आने लगी। वकील लोग भी इस बात पर अभिमान करते थे कि उन्होंने भी तीसरे दर्जेमें ही अपनी यात्रा की है। कांग्रेसकी वक्तृताएं और कार्यवाही हिन्दी और उर्दूमें होती थी। यद्यपि कहीं कभी कभी दक्षिणके लोगोंको समझानेके लिए अंग्रेज़ी एक गौणभाषाके रूपमें प्रयुक्त की जाती थी। मद्रासके भी कई सभासद प्रसन्नतासे इस बातको प्रगट करते थे कि वे हिन्दीको कार्यवाही समझते हैं।

## कांग्रेस क्या चार लाखका मेला था ?

इस साल कांग्रेसकी नई रचना ( constitution ) बनानेके कारणसे प्रतिनिधियोंकी संख्या नियत कर दी गई। दूसरे देखनेवालोंके लिए भी टिकटोंकी संख्या बहुत अधिक न थी। इसलिए विचार था कि कांग्रेसमें जानेवालोंकी संख्या कोई बहुत अधिक न होगी। इससे बढ़कर चुने हुए नेताओंके कपड़े जानेसे यह भी सन्देह पड़ जाता था कि उच्च भाषणोंके न होनेसे बहुत शोभा न होगी। लोगोंके दिलोंमें कई प्रकारके सन्देह

कांग्रेसके अधिवेशन होनेके विषयमें हो रहे थे और एक प्रकारसे आनेवालोंको एक प्रकारकी सूचना दी गई थी कि जो लोग आवें वे हर एक प्रकारके कष्ट और संकटके लिए तय्यार होकर आवें। इन सब बातोंके होते हुए भी उपस्थित जन-संख्याकी दृष्टिसे इस कांग्रेसको अद्वितीय, अनुपम, अभूतपूर्व कृतकार्यता प्राप्त हुई है। एक साधारण दृष्टिसे देखनेवाला आदमी कह सकता है कि कांग्रेसकी भूमि एक प्रकारके मेलेका स्थान थी जहांपर कि तीन चार लाख आदमी सम्मिलित होंगे। कांग्रेसके पंडालमें दस बारह हजारके लगभग दर्शक और प्रतिनिधि समुपस्थित थे शेष सब लोगोंके समयको उपयुक्त बनानेके लिए दिन भर और रातभरमें कई स्थलोंपर भिन्न भिन्न व्यक्तियोंके व्याख्यान होते रहे।

## कांग्रेसका चित्र।

अहमदाबाद शहरसे डेढ़ मीलके अन्तरपर जङ्गलमें कांग्रेसका नगर बनाया गया। इस नगरकी रचना लकड़ी और खद्दरसे की गई। देखनेवाला जहां कहीं देखता था खद्दर ही खद्दरके बने हुए गृह दिखाई देते थे। लाखों मनुष्योंमें कोई व्यक्ति भी ऐसा दिखाई न पड़ता था जो खद्दरमें सुभूषित न हो। प्रदर्शनीके अन्दर भी अधिकतर भिन्न २ प्रकारके खद्दरका दिखलावा दिखलाया गया। भिन्न २ कैम्पोंमें परम रमणीय सड़कें तैय्यार की गई थीं। सड़कोंके दोनों ओर थोड़ी थोड़ी वनस्पति भी लगायी

गई थी। सारे कमरे समान रूपमें खद्दरके ही बने हुए थे। इन कमरोंमें बिजलीके प्रकाश और पानीके नलोंका प्रबन्ध भी अच्छा किया गया था। इस्लामनगर बीचमें पृथक् था। इसमें प्रविष्ट होनेके बड़े द्वारपर एक देव-चरखा इस तरहपर रखा था जैसा कि लाहौरके अजायबघरके सामने भङ्गियोंकी तोप रखी हुई है। खिलाफतका पण्डाल अलग था। कांग्रेसका पण्डाल फाटकपर देखनेसे बड़ा भारी किला मालूम होता था। इसके ऊपर 'इण्डियन नैशनल कांग्रेस' के स्थानमें 'राष्ट्रीय महासभा' हिन्दीके मोटे अक्षरोंमें लिखा था। कांग्रेसके सारे दफ्तर खद्दरके ही बने हुए थे। बैठनेका फर्श खद्दरका था। किसी व्यक्तिको जूता पहन कर जानेकी आज्ञा न थी, यद्यपि वहां कोई मेज़, कुर्सी उपस्थित न थी। पण्डालकी विशालता और शोभा आगेसे दुगुनी दिखायी देती थी।

## सच्चे अनुरागका एक दृश्य।

सायंके ३ बजे कांग्रेसका सत्र ( Session ) प्रारम्भ हुआ। तीन बजेसे पहले ही लोग पण्डालमें भर गए। पण्डालके बाहर आदमियोंकी इतनी अधिक संख्या थी कि पग पग चलनेमें बड़ा ही समय लगता था। स्वयंसेवक बड़ीही सभ्यता, शिष्टाचार और प्रसन्नतासे अपना प्रबन्ध रखते थे। घंटों पहिले सड़कके दोनों ओर दो पंक्तियोंमें लाखों आदमी खड़े हुए एक व्यक्तिके आनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। मौलाना मुहम्मदअलीकी बूढ़ी माता

जब पंडालके अन्दर प्रविष्ट हुईं तो लोगोंने उनका बड़े मान और प्रतिष्ठासे स्वागत किया। पंडालके अन्दर किसी बड़े और छोटेमें भेद दिखायी न देता था। खद्दरके वेशने अमीर और गरीबके अन्दर एक विचित्र प्रकारकी समानता उत्पन्न कर दी है। कांग्रेसका प्रारम्भ विष्णुदिगम्बर और उनके साथियोंकी मंडलीके गायनसे हुआ। सर्वत्र शान्ति छा गई। इस पीछे गुजरातकी स्त्रियोंकी मण्डलीने गायन किया। इसके बाद तैय्यबजीकी सुपुत्री मञ्चपर अकेली ग़ज़ल गा रही थीं कि इतनेमें लोगोंकी आंखें बाहरको फिर गईं। ज्योंही कि फाटकमेंसे नंगे पांव और नंगे शरीर एक लंगोट पहने हुए महात्मा गांधी प्रविष्ट हुए रास्तेके दोनों ओर लोग दण्ड-वत् और प्रणामके लिए खड़े होगए। शीघ्र शीघ्र पग उठाते हुए कांग्रेसकी फ़र्शकी ओर आरहे थे। लोगोंके हृदय इस पुरुषके लिए आश्चर्य और विनयसे भरे हुए प्रतीत होते थे। इस आश्चर्यके समयमें मुझे सब कुछ भूल गया और यही विचार आया कि इतने इस समुदायमें एक व्यक्ति विक्षिप्तसा चिल्ला रहा है। मैं समझा कि ऐसा विचार करनेसे मैं एक प्रकारसे महात्मा गांधीके लिए अपमानका भाव दिलमें ला रहा हूं। मान हो चाहे अपमान, मैं अपने भावको दिलसे नहीं हटा सका कि वाह्य भोग विलास और धन ऐश्वर्यकी पूजामें फंसी हुई दुनियाके अन्दर सच्चे अनुराग या विक्षिप्तताका यह एक विचित्र दृश्य है जो कि इस पुरुषके आकारमें हमको दिखायी देता है। देशके लिये सचमुच वह एक विक्षिप्त

(पागल) ही दिखायी पड़ता था। यही एक दृश्य है जिसने मेरे दिलमें सबसे बढ़कर स्थान कर लिया और सब बातें ध्यानसे उतर गयीं ।

## कांग्रेसका नया कार्य्य।

इस कांग्रेसमें कार्यवाही अत्यन्त संक्षिप्त हुई । कोई व्याख्यान न हुआ। यद्यपि व्याख्यान देनेवाले व्यक्ति पर्य्याप्त संख्या में उपस्थित थे । कोई बहुत प्रस्ताव पास न हुए क्योंकि प्रस्ताव पास करनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं रही। एकही बड़ा प्रस्ताव था वही देशबन्धु दासके सन्देशका निचोड़ या सार था । अब व्याख्यानों और प्रस्तावोंका समय बीत गया है। अब तो समय है कि हरएक आदमी आचरण करने पर तय्यार हो। देशको सच्चे सेवकोंकी आवश्यकता है। देश एक बड़े आचरण-सम्बन्धी युद्धमें सम्मिलित हुआ है। मैदानमें निकलो और अपने जीवन और आचरणमें देशके लिये बलिदान करो। पुरानी कांग्रेसमें व्याख्यानोंकी आवश्यकता पड़ती थी। वेही नेता हुआ करते थे जो अच्छे व्याख्यान देते हों। अंग्रेज़ी भाषाका राज्य था। अङ्गरेज़ी भाषामें अच्छी वक्तृताएं देनेवाले देश और कांग्रेसके नेता थे । जीवनमें आत्मत्याग करनेवालोंके लिये कांग्रेसमें कोई स्थान न था । लोग समझते थे कि अच्छी वक्तृताओं और अच्छी शब्द-योजनाओंसे देश अपना उद्देश्य प्राप्त कर सकेगा । पुरानी कांग्रेस अब

समाप्त हो चुकी है। महात्मा गांधीने कांग्रेसका उद्देश्य बदल दिया है। इसके अन्दर नयी आत्मा डाल दी। कांग्रेसकी नयी आत्मा आत्म-बलिदान है। देशके लिये नया अनुराग और प्रेम है। यह अनुराग अहमदाबादके कांग्रेस-नगरमें प्रभातके समयमें प्रकट होता था जबकि कई दर्जन गायक मंडलियां जिनमें सैकड़ों स्त्रियां भी इकट्ठी होकर अपनी मंडलियां बनाती थीं घंटों तक फिरती थीं और देशभक्तिकी भावनामें पागल हुई हुई स्वतंत्रताके गीत गाती थीं।

## एक बात और

यह मिथ्याज्ञान सदाके लिए दूर कर देना चाहता हूं कि हम अपनी उच्च शिक्षा देकर विद्यार्थियोंको जीविकाका कोई उच्च साधन प्राप्त करा देंगे। उच्च शिक्षाका यह उद्देश्य ठहराना अत्यन्त संकीर्ण हृदयता है। संसारमें किसी देशमें उच्च शिक्षाका यह उद्देश्य नहीं समझा जाता और न हमारे विद्यार्थियोंको कभी यह उद्देश्य समझना चाहिये।

किसी ऐसी कलाका सिखाना भी जिससे आदमी जीविका कमा सके, एक प्रकारकी शिक्षा कहलाता है किन्तु जब हम उच्च शिक्षा प्राप्त करनेके उद्देश्यसे कालिजमें आते हैं तो हमें ऐसे विचारोंको दिलसे दूर कर देना चाहिए। उच्च शिक्षाका उद्देश्य उच्च प्रकारका 'मनुष्य' बना देना है और एक जातीय कालिजमें

उच्च शिक्षाके केवल यही अर्थ हैं कि हम अपनी जाति और देशके लिए उच्च कोटिके मनुष्य बनेंगे। कालिजमें पढ़नेसे हमारे मस्तिष्ककी उत्तम प्रकारकी शक्तियोंका विकास होगा और पुष्टि मिलेगी। हम अपने देश और जातिकी समस्याओंको उन्नत किये हुये मस्तिष्ककी शक्तिसे सोच सकेंगे। यदि कोई शिक्षण-संस्था प्रतिवर्ष एक पर्याप्त संख्या ऐसे व्यक्तियोंकी पैदा कर सकती है, वह देशके लिये बड़ा फलदार वृक्ष है जिसकी रक्षाके लिये हमें तन मन धन सभी कुछ अर्पण कर देना चाहिए। इस समय देशकी एक ही आवश्यकता है और वह मस्तिष्क-शक्ति रखनेवाले सुपूत पैदा करना है।

हमसे प्रश्न किया जाता है कि तुम्हारी डिग्री लेकर नौजवान क्या करेंगे? मुझे इस प्रश्नका उत्तर देना तो कठिन मालूम होता है लेकिन मैं इस प्रश्नका उत्तर सुगमतासे दे सकता हूं कि हमारी डिग्री प्राप्त करनेवाले नौजवान क्या नहीं करेंगे। वे वकील बनकर अपने देश और जातिको मुकद्दमोंके जालमें नहीं फंसावेंगे और न गरीबोंकी मूर्खतासे लाभ उठाकर उनको लूटकर अपना घर भरेंगे और न वे वर्त्तमान सरकारके एजेण्ट बनकर किसी प्रकारसे इसकी सहायता करेंगे। गवर्नमेंटको अपना काम चलानेके लिए क्लर्कों, पटवारियों, इञ्जिनियरों, डाक्टरों आदिकी आवश्यकता है। गवर्नमेण्टने अपनी आवश्यकताओंको पूर्ण करनेके लिए कालिज और स्कूल साधनके तौरपर स्थापित किए हैं। हमारे देशकी भलाईमें यह आवश्यक है कि वर्त्तमान

गवर्नमेण्ट-प्रणालीको अपने ऊपर स्थिर रखनेके लिये न तो हम एजेण्ट पैदा करें और न हम एजेण्ट पैदा करनेके साधन बनायें।

जितने कालिज और स्कूल गवर्नमेण्ट यूनिवर्सिटीके साथ सम्बन्ध रखनेवाले इस समय देशमें पाए जाते हैं वे केवल इसी एक उद्देश्यको पूरा करनेके लिए हैं। बड़े अभिमानसे इन संस्थाओंकी उच्चता दिखानेके लिए जो बात कही जाती है वह केवल यही है कि इन कालिजोंके उत्तीर्ण विद्यार्थियोंको सरकारी नौकरीमें लिया जाता है। नैशनल कालिजको यह अभिमान प्राप्त करनेकी आवश्यकता नहीं और न वह इस भेदको किसी अर्थमें अपने विरुद्ध समझता है। सरकारी नौकरियोंको छोड़कर जो कार्य इन कालिजोंके विद्यार्थी करनेके योग्य होंगे उनसे बढ़कर जातीय महाविद्यालयके विद्यार्थी कर सकेंगे क्योंकि इनकी शिक्षाकी नींव अधिक दृढ़ और अचल है।

दुनियांके सर्व सभ्य देशोंके अन्दर यूनिवर्सिटीकी उदार शिक्षा केवल शिक्षाके ही उद्देश्यसे दी जाती है। उस शिक्षाको प्राप्त करके नौजवान जिस किसी कामको करते हैं वह कई गुना अच्छा करते हैं अपेक्षा इसके कि वे इस कामको तीन चार साल पहले आरम्भ करते। यह सत्य है कि इन विश्वविद्यालयोंमें उच्च कलाएं जैसे इञ्जनीयरिङ्गकी भिन्न २ शाखायें, कृषि, डाक्टरी आदिके लिए पृथक् पृथक् कालिज हैं किन्तु यूनिवर्सिटीका वास्तविक भाग केवल उदार शिक्षा ही समझा जाता है।

इन कलाओंकी शिक्षा देनेवाले कालिज स्थापित करनेके लिए

बहुत ही अधिक रुपयेकी आवश्यकता होती है। यदि जातीय विश्वविद्यालयके हाथमें रुपया आ जाय तो इन सबका धीरे धीरे प्रबन्ध किया जा सकता है। सबसे पहली आवश्यकता तो एक "आयुर्वेदिक मेडिकल कालेज" और अस्पतालकी होगी जिसमेंसे प्रति साल सैकड़ों डाक्टर पैदा किए जा सकते हैं जो कि गांव गांवमें फैलकर बड़ी प्रतिष्ठासे रोटी कमा सकेंगे।

साधारणतया यह कहा जाता है कि भिन्न २ प्रकारकी इण्डस्ट्री (कला कौशल) सिखानेके लिए कालिजमें प्रबन्ध किया जाना चाहिये जिससे विद्यार्थियोंको रोटीका साधन मिल जाय। मैं कालिजके द्वारा किसी प्रकारके कलाकौशलको उन्नति देना असम्भव समझता हूं। प्रथम तो संसारमें किसी जगह कालिजों और स्कूलोंके द्वारा कलाकौशल नहीं सिखाया जाता। सब जगह कलाकौशल सीखनेवाले इसी ढङ्गपर सीखते हैं जैसे कि हमारे यहां दर्ज़ी, लोहार, बढ़ई आदि अपना २ काम सिखाते हैं। कालिजोंमें कई कलाकौशलोंका केवल विचारात्मक पहलू पुस्तकों और व्याख्यानों, तथा परीक्षणों और अपने अनुभवोंके द्वारा सिखाया जाता है परन्तु इसका व्यापार-सम्बन्धी पहलू व्यापारमें प्रविष्ट होकर ही सिखाया जाता है। हमारा देश व्यापारकी दृष्टिसे संसारमें कोई सत्ता नहीं रखता। हम कोई चीज़ अपने लिए पैदा नहीं करते, हमारे यहां कोई कलाकौशल नहीं हमारी सब वस्तुयें विदेशी कलाकौशलसे तय्यार होकर हमारे लिये आतीहै। हमारी फैक्टरियां दूसरे देशोंमें हैं। इन कारणोंसे

हमारे नौजवानोंको इन्डस्ट्रीका सीखना व्यर्थ है। वे सीखकर क्या करेंगे? उनको क्रियात्मक रूपमें कुछ लाभ नहीं होगा। कितने ही ऐसे नौजवान हैं जो कि विदेशोंसे भिन्न २ प्रकारकी इण्डस्ट्री सीखकर आये हैं परन्तु इस देशमें इनके लिये कोई काम नहीं। इनका सीखा सिखाया किसी काम नहीं आता।

हमारे यहां इण्डस्ट्री क्यों नहीं चल सकती? क्योंकि हमें विदेशोंके चिरकालसे स्थापित किए हुए कारख़ानोंसे बराबरी करना पड़ता है। इनके साथ हम किसी तरहसे भी मुकाबिला नहीं कर सकते जबतक हमारे हाथमें विदेशी पैदावारको यहां आनेसे रोकनेका पूरा सामर्थ्य न हो। दूसरे शब्दोंमें स्वराज्य प्राप्त हुए बिना हमारी कोई इन्डस्ट्री नहीं चल सकती, और न हमें हाथका कोई हुनर सहायता दे सकता है। न मस्तिष्क-सम्बन्धी योग्यता ही काम आ सकती है, न हम अपनी पूंजीको लाभकी आशापर किसी काममें लगा सकते हैं जबतक हमारा दूसरोंसे मुकाबिला है। हमारे करोड़ों भारतवासियोंकी आवश्यकताएं पूर्ण करनेके लिए दूसरे देशोंकी पूंजी लगी है। दूसरोंके दिमाग़ और हाथोंके हुनरको लाभ पहुंचता है। हमारे हाथ, दिमाग़ और रुपया अपने लिए काम ढूंढ़ते फिरते हैं।

अपने नौजवानोंके लिये आजीविकाका साधन पैदा करनेके लिए एक ही उपाय 'स्वराज्य' है। या दूसरा उपाय यह हो सकता है कि हम मैशीन और कलवाले कारख़ानोंकी तय्यार की हुई वस्तुओंका प्रयोग करना सर्वथा छोड़ दें। इसका अभिप्राय केवल

खद्दर और खद्दर जैसी वस्तुओंका प्रयोग करना है जिसका परिणाम यह होगा कि हमारी आवश्यकतायें पूर्ण करनेका सामान भद्दा हो या अत्युत्तम, हमारे देशमें यही होगा। हम स्वयं अपनी आवश्यकतायें पूरी करेंगे और आवश्यकताओंका यहां पूरा किया जाना ही जीविकाके भिन्न भिन्न साधन पैदा करना है। इसलिए 'स्वराज्य' और 'खद्दर' महात्मा गांधीने हमारे सामने आदर्श रखा है। यदि अपने देशमें कलाकौशल (इण्डस्ट्री) की उन्नति चाहते हो तो इन दोनोंके लिए हर प्रकारसे यत्न करो। कोई कालिज इण्डस्ट्रीको उन्नति नहीं दे सकता। देशके नौजवानोंके लिए जीविका उपस्थित करना जातीय प्रश्न है। सारी जाति मिलकर इस प्रश्नका समाधान कर सकती है। कोई व्यक्ति अपने लिए जीविका ढूढ़नेसे या कोई कालिज लड़कोंको कलाकौशल सिखानेसे इस प्रश्नको हल नहीं कर सकता। जातीय-महाविद्यालयका काम ऐसे नौजवानोंको पैदा करना होगा जो हमारे लिए स्वराज्य प्राप्त कर सकें और प्राप्त करके हमारे अनुकूल बना सकें।

---

# आर्यजातिको मुक्ति दिलानेवाला
## ऋषि दयानन्द ।



यूरोपके इतिहासका मध्य समय ( middle ages) यूरोपमें अन्धकारका युग है। इन शताब्दियोंमें यूरोपके मस्तिष्कके ऊपर इतिहासका पर्दा पड़ा रहा। उसमें कोई प्रकाशकी किरण नहीं पहुंची और न किसी प्रकारकी ज्ञानकी उन्नतिका प्रकाश हुआ। पन्द्रहवीं शताब्दीके मध्यमें कुस्तुन्तुनियापर तुर्कोंने अधिकार कर लिया जिससे पूर्वीय रोमन राज्यकी इतिश्री हो गई। वर्तमान युग तक यूरोपकी जातियां इस घटनाको अपने लिये एक बड़ा भारी धब्बा समझती हैं। इसी घटनाका एक विचित्र परिणाम युरोपमें यह हुआ कि इसके सब बड़े बड़े देशोंमें नये प्रकाशकी नींव पड़ गई। कुस्तुन्तुनियाके अन्दर अभीतक पुरानी यूनानी और रोमन फिलासफीके खजाने विद्यमान थे। तुर्कोंका अधिकार होते ही इस स्थानके विद्वान लोग उन पुस्तकोंको लेकर इटली, जर्मनी, फ्रांस, इङ्गलैण्ड आदि देशोंमें जा बसे। नये सिरेसे इन देशोंके विश्वविद्यालयोंमें पुरानी फिलासफ़ीका स्वाध्याय प्रारम्भ हुआ। इस स्वाध्यायके आन्दोलनको यूरोपमें ज्ञानका नवीन युगका नाम दिया गया है। इस आन्दोलनने यूरोपके जकड़े हुए मस्तिष्कको स्वतंत्र कर दिया। चर्चने यूरोपके मस्तिष्कको अपने

रीति रिवाजोंकी जंजीरोंसे जकड़ कर कैद कर रखा था। किसी पुरुषको बाइबिलतक पढ़नेकी आज्ञा न थी। यूरोपके बादशाह जो अपने अपने देशोंमें स्वयं एक सत्तात्मक शासन रखते थे वे भी पोपसे डरते थे। नये प्रकाशने इन कैदकी जंजीरोंको तोड़ दिया और यूरोपका मस्तिष्क स्वाधीनतासे गति करने लगा जिसका परिणाम वे सुधार हुए जिन्होंने धार्मिक पराधीनताको यूरोपमें इतिश्री कर दी। जो जातियां धार्मिक ढंगपर स्वाधीन हो गईं उनके दिलोंमें अपने सांसारिक बातोंमें स्वाधीनताकी इच्छा बल पकड़ने लगी। जब धार्मिक-बन्धन संसारमें न रहे तो राजनैतिक बन्धन क्यों कर रह सकते थे? चर्चने राजनैतिक कानूनोंका सहारा लिया था। चर्चका भय दूर होते ही राजनैतिक बुराई भी साथ ही दूर होनी शुरू हो गई। इसका परिणाम यूरोपमें राजनैतिक क्रांति हुआ जिसका प्रकाश इङ्गलैण्ड, फ्रांस, इटली आदिकी क्रांतियोंमें पाया जाता है। इन सारे दृष्टान्तोंके वर्णन करनेका अभिप्राय यह है कि मानवीय मस्तिष्कको यदि एक पहलूमें दास बना लिया जाय तो वह स्वयं ही साराका सारा दासताकी अवस्थामें आ जाता है। उसे यदि दासतासे निकाल दो तो वह स्वयं ही दूसरी प्रकारकी दासतासे स्वतन्त्र हो जाता है।

स्वामी दयानन्दने राजनैतिक स्वाधीनताका प्रचार नहीं किया और न प्रकटतया इनके प्रवर्तित आर्यसमाजका राजनैतिक स्वाधीनतासे कोई सम्बन्ध ही है परन्तु जो बात स्वामी दयानन्दने की

और जिसके लिए स्वामी दयानन्द इस समयका पहला महापुरुष हुआ वह यह थी कि स्वामीने हिन्दू जातिके मस्तिष्कको साम्प्रदायिक दासताकी कैदसे मुक्त कर दिया। यह जो अवस्था मध्ययुगमें यूरोपकी जातियोंकी थी इससे कहीं बढ़कर हिन्दूजाति पुरोहितों, मन्दिरों, पाखंडों और दूसरी पराधीनताकी जंजीरोंमें फंसी हुई थी। देशसे पांव बाहर रखना तो एक ओर, उनको अपने घरसे पांव निकालनेके लिए भी विशेष समय और मुहूर्त ढूंढ़ना पड़ता था। विवाह करनेका समय निश्चित करना भी पुरोहितोंके हाथमें था। खाने पीनेके नियमके लिए भी वे दूसरोंके अधीन थे। हिन्दुओंके तीर्थोंके ऊपर जा मन्दिरोंकी अवस्थाको देखकर आश्चर्य होता था कि किस प्रकार वे स्थान जिनमें इस हद्का अत्याचार और धर्मका नाश होता है एक जातिके पूजनेका स्थान बने हुए हैं और जिनके लिए इस जातिके सारे दानकी शक्ति खर्च हो रही है। इसके स्थानपर कि वे हमारे धर्मके उद्धारके कारण बनाये जायं वे ही हमारे मस्तिष्ककी दासताकी जंजीरें बन रहे हैं।

जब धर्मके ठेकेदार केवल पाखण्ड और ठगीके ठेकेदार ही बन गये तो जातिके अन्दरसे धर्मका प्रेम भी उड़ गया। वे लोग जो मन्दिरोंके आगे लेट लेटकर दण्डवत करते हैं और माथोंपर बड़े बड़े तिलक लगाते हैं वे मुर्देकी तरह अशक्त पड़े रहते हैं जब उनके सामने उनके सैकड़ों और हजारों भाई दूसरे मतोंमें चले जाते हैं। स्वामी दयानन्दने हिन्दुओंकी इस

मानसिक दासतापर एक ठोकर लगायी। उनको बताया कि "तुम दास नहीं हो, तुम्हारा नाम हिन्दू नहीं है; तुम आर्य्य हो; तुम स्वतंत्र हो; तुम्हारा मस्तिष्क स्वतंत्र होना चाहिये। इसका स्वाभाविक परिणाम तुम्हारी शारीरिक स्वतंत्रता हो जायगी"।

मेरा यह विश्वास है कि यदि हिन्दू जाति बच सकती है तो स्वामी दयानन्दके मिशनको ग्रहण करके आर्य-समाजकी शरण लेनेसे ही, अन्यथा नहीं।

# "अहिंसा"

## परीक्षाकी कसौटीपर

जिन लोगोंने महात्मा गांधीको पिछली कांग्रेसके अवसरपर देखा है सब इस विषयमें सहमत हैं कि वह साधारणतया शान्त और प्रसन्न थे। चलते फिरते, उठते बैठते और बात-चीत करते हर समय उनके चेहरेसे हंसी टपकती थी। कई बार वह कहते हुए सुने गये "मैंने स्वराज्यका रास्ता दिखा दिया है, वह सामने नजर आता है"।

## देशकी नाजुक अवस्था

देश तो इस समय एक परीक्षाकी अवस्थामेंसे गुजर रहा है। यद्यपि अनेकों वृद्ध और नौजवान दौड़ते हुए हंसी खुशी जेल जा रहे हैं, यद्यपि यह जोश दिलकी बेचैनीके साथ मिला हुआ है हर मिनट लोगोंका दिल कोई नई बात या घटना सुनने पर उमड़ा चला आता है। "कहिये! क्या खबर है?" यह प्रश्न हर समझदार मनुष्यकी जिह्वापर है। इस बेचैनी और अशान्तिके समुद्रमें एक पुरुष जहाजके सच्चे कप्तानकी तरह बिलकुल शान्त और खुश दिखाई दे रहा है। यह क्यों?

## स्वराज्यका मार्ग

लोग कहते हैं महात्मा गांधीने ३१ दिसम्बर तक स्वराज्य प्राप्त करनेका निश्चय किया था। वह निश्चय कहां पूरा हुआ? चाहे इन सन्देह रखनेवाले लोगोंको दिखाई न देता हो परन्तु महात्मा गांधीको स्वराज्य पास दिखाई दे रहा है और वह देख २ कर प्रसन्न होते हैं। इनकी प्रसन्नता और हंसी केवल इसी बातमें है कि उन्होंने देशके बड़े और छोटे नेताओंको स्वराज्यके पथपर डाल दिया है। वह पंक्ति जेलके दरवाजेसे प्रारम्भ होती है। वह अपने दिलकी तहमें प्रसन्न हैं—"कि देशके वे मनुष्य, जो कि राजाओंकी समानता रखते थे आज जेलमें बन्द पड़े हैं और देशमें 'हिंसा'का कोई चिह्न भी दृष्टिगोचर नहीं होता"। यह महात्मा गांधीका आदर्श है और यही उनका स्वराज्य है।

## महात्मा गांधीका कमजोर पहलू

पिछले थोड़े समयमें दो अवसर ऐसे आये जबकि महात्मा गांधी अपने कामको, अपनी सर्वप्रियताको, यहांतक कि जो कुछ उन्होंने प्राप्त किया है छोड़नेपर तैयार हो गये। वे अवसर वे हैं जबकि लोगोंकी तरफसे थोड़ी सी हिंसाका प्रकाश हुआ। महात्मा गांधीकी एक ही कमजोरी है, जिससे इनका बाल बाल काँप जाता उनकी नसें गतिमें आ जाती हैं और उनका मस्तिष्क भी चकरा जाता है और उन्हें आगा पीछा कुछ नहीं सूझता। वह वह समय है जबकि उन्हें अपने कामके साथ मिला हुआ कहीं हिंसाका लेश मात्र भी दीख पड़े।

पिछली कांग्रेसके समयपर महात्मा गांधी एक ही बार बड़े ही व्याकुल और निराश दीख पड़े और वह वह समय था जब कि कांग्रेस कमेटीके अधिवेशनमें उनके 'अहिंसा' के उपायोंपर आक्रमण किया गया। उन्होंने झटपट विवादको स्थगित कर दिया जिससे उनके विरोधी उनसे बातचीत करके पहले निर्णय कर लें।

## यही उनकी सफलताकी कुञ्जी है।

यह महात्मा गांधीका निर्बल पहलू है और यही उनके जीवनका मर्म और कामकी सफलताकी बड़ी कुञ्जी है। गवर्नमेंटने महात्मा गांधीको कैद नहीं किया और वह बड़ी सख्त भूल करेगी यदि उनको पकड़ लेगी इसलिये कि गवर्नमेंट अच्छी तरह समझती है कि यही एक पुरुष है जिसने भारतवर्षके राजनैतिक आन्दोलनके अन्दर 'अहिंसा' का भाव डाल दिया और जो आगेके लिये भी इसे वशमें करके शान्तिमय रख सकता है। हमें सदैवके लिये समझ लेना चाहिये कि महात्मा गांधी जहांपर देशको स्वतन्त्रताकी ओर ले जा रहे हैं वह एक पैगम्बर हैं जो एक नया सम्प्रदाय अहिंसाका क्रियात्मक जीवनमें प्रचार करना चाहते हैं। अहिंसा इन अर्थोंमें जैसी कि इसकी शिक्षा बाइबिलमें दी गई है और जिसका टाल्स्टायने जोरोंसे प्रचार किया है। "यदि तुम्हें कोई एक गालपर थप्पड़ लगाये तो दूसरी गाल उसके सामने कर दो" इसकी शिक्षा

पहले पहल महात्मा बुद्धने दी और जैन मतने इसे अन्तिम सीमापर पहुंचा दिया। ऐसा मालूम होता है कि महात्मा गांधीने यद्यपि वह वैष्णव हैं, अहिंसाकी पवित्रताकी शिक्षा किसी जैनाचार्य्यसे प्राप्त की है।

## अहिंसाका तत्त्व।

आर्यशास्त्र, अहिंसाको इन अर्थोंमें केवल संन्यासीका धर्म बताते हैं। क्षत्रियों के लिए युद्धमें मरना और मारना तो गीताने भी सबसे बड़ा धर्म बताया है प्रत्युत गीता तो यहांतक कहती है कि जिस मनुष्यके अन्दर अहंभाव नहीं और जिसका दिल कलुषित नहीं वह मारता हुआ भी नहीं मारता। इस्लामकी फ़िलासफ़ी तो इसके विरुद्ध चलती है। 'गिजा' का सिद्धान्त तो यह बताता है कि गाजी (घातक) का दर्जा स्वर्गमें उतनाही ऊंचा होता जाता है जितने अधिक शत्रुओंको मारकर वह शहीद होता है। इन बातोंके होते हुए भी महात्मा गांधीका पूरा विश्वास है कि इन सब मतोंकी ऊंची शिक्षा और पश्चिमीय जातियोंके स्वभावको विशेषता यह है कि शत्रुको प्रेमके द्वारा जीता जाय। टाल्स्टायका साहित्य पढ़ने वालोंकी अधिक संख्यामेंसे एक महात्मा गांधी होंगे जिन्होंने अपने जीवनमें उस नियमपर आचरण करना आरम्भ किया। मैंने अफ्रीकामें उनके विचार देख लिए थे। लंदनमें एक छोटासा रिसाला 'अमरीकन वलिस्थूरो' का सार्वजनिक कानून भङ्ग ( Civil

Disobedience) के सिद्धान्तपर लिखा हुआ मुझे मिला। मैंने उसे महात्मा गांधीको भेज दिया। उन्होंने इसके लिये कृतज्ञता प्रकाश की और उसकी हज़ारों प्रतियां छपवाकर अफ्रीकामें बांटीं। इसमें भी विचार यही था कि बलवान शक्तिके अत्याचारके मुकाबिलेमें कानूनका न मानना और इसके लिये हर प्रकारका कष्ट उठानेपर तय्यार होनाही एक उपाय है।

## संसारसे युद्ध दूर करनेका उपाय।

यूरोपकी जातियोंमें एक प्रबल दल युद्धके विरुद्ध पैदा हो रहा है। वर्त्तमान लड़ाईकी शिक्षाओंमेंसे सबसे बड़ी शिक्षा यही है कि लड़ाई लड़ाईको समाप्त नहीं कर सकती और लड़ाईसे संसारमें शान्ति नहीं पैदा की जा सकती। महात्मा गांधी युद्धके विचारके विरुद्ध अपना अहिंसाका नियम उपस्थित करते हैं। इस अस्त्रसे वह संसारको जीतना चाहते हैं। इस अस्त्रको तीक्ष्ण करनेके लिए उन्होंने भारतके भिन्न भिन्न मतोंको अपनी सहयोगितामें लेनेका यत्न किया और इस उद्देश्यको प्राप्त करनेमें उन्हें खूब सफलता हुई। भारतमें हिन्दू मुसल्मान एक दूसरेसे इतने दूर थे कि उनके अन्दर एकताका कोई चिह्न भी दृष्टिगोचर न होता था।

## हिन्दू मुस्लिम एकताका चिन्ह

भारतवर्षकी मुक्तिके सामने एक यही रुकावट थी और वस्तुतः बड़ा आदमी वही होता था जो इस कठिनाईको दूर

करता। महात्मा गान्धीके नियमने उसे सहायता दी। इनका दिल इतना विशाल था कि इनके अन्दर मुसल्मानोंका हिन्दुओं-से ऊंचा दर्जा था। उन्होंने अपने प्रेमसे पहले अफ्रीकाके मुसल्मानोंको और पीछे भारतके मुसल्मानोंको अपने साथ मिला लिया। वाह्य अवस्थाएं उनके अनुकूल थीं, उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एक्यताका एक दृढ़ पक्ष पैदा कर दिया। अब भी महात्मा गान्धीका यह विश्वास है कि अहिंसाके नियमपर चलनेसे ही यह एकता स्थिर और दृढ़ हो सकती है। यदि परस्पर शत्रु समझकर हानि पहुंचानेको उचित समझा जाय तो यह एकता झटपट शत्रुताके रूपमें प्रगट होगी। महात्मा गान्धी अपने दिलमें अंग्रेज जातिसे भी वैसा ही प्रेम रखते हैं जैसा दूसरे आदमियोंके साथ। वे देखते हैं कि अंग्रेजोंके जातीय आचरणके अन्दर यह त्रुटि है कि वह जातीय विषयोंमें सदाचारकी कुछ परवाह नहीं करते। महात्मा गान्धी समझते हैं कि भारतको इङ्गलैंडके साथ रखता हुआ वे अपनी आत्मिक शक्तिसे इनके जातीय जीवनको बदल डालेंगे। कुछ समय हुआ जब कि पिछले वायसराय लार्ड चेम्सफोर्डके साथ बातचीतकरते हुए वायसरायने आत्मिक बलकी शक्तिपर मखौल उड़ाई। महात्मा गान्धीने उत्तरमें कहा "इस समय आप घृणा (उपेक्षा) करते हैं परन्तु आप देखेंगे कि पूर्वका आत्मिकबल पश्चिमकी पाशविक शक्तिपर विजय प्राप्त करेगा।" लोग पूछते हैं कि क्या अंग्रेज जातिका ऐसा नर्म दिल है कि आत्मिकबलके प्रभावमें आकर

वह दब जायगी ? अङ्गरेजी जातिके पिछले इतिहाससे तो किसी ऐसे नर्म दिलके भावोंका प्रकाश नहीं होता। यदि सच कहा जाय तो हमें एकही व्यक्ति ऐसा देखाई देता है कि जिसे शक्ति (might) के विरुद्ध असत्य (Right) के ऊपर इतना पूरा विश्वास है कि वह इस बड़े युद्धमें विजयकी आशा रख सकता है। वर्त्तमान अङ्गरेजी शासनको हटानेके दो ही उपाय हो सकते हैं एक 'हथियारोंके द्वारा युद्ध'—जिसके लिये हम अयोग्य हैं। इस विचारके लोग हमारे सामने गोरिल्ला ढंगको प्रस्तुत करते हैं जिससे कि हम किसी उपायसे भी अपनी जानको सुरक्षित रखकर अपने शत्रुकी जान लेनेका यत्न करें। महात्मा गांधी इस विचारके ध्यान मात्रसे भी चौंक उठते हैं। इनका उपाय केवल आत्मिक-बल है। हमें इस उपायपर अभी विश्वास नहीं आता। संसारमें सब राजनैतिक विजय हथियारी लड़ाईके द्वारा प्राप्त हुये हैं। कोई विजय आत्मिक दबावका परिणाम नहीं निकली। हमने आत्मिक बलका युद्ध नहीं सुना और न हम सुगमतासे इसकी सत्ताको समझही सकते हैं।

आत्मिक दबावका मोटा उदाहरण हम यों देख सकते हैं कि जब कोई अकेला आदमी सहस्रों आदमियोंके समूहमें फिर जाता है और वह दिलमें अनुभव करता है कि वह सबके सब इसके विरुद्ध लहरें पैदा कर रहे हैं तो इसका दिल कांपे बिना नहीं रह सकता। उसकी नसोंकी शक्ति टूट जाती है और उसको

मुकाबलेमें खड़े होनेका साहस नहीं रहता। महात्मा गांधीके आत्मिक युद्धने अंग्रेजी शासनके जादूको तोड़ दिया। लोगोंके दिलोंसे कानूनकी प्रतिष्ठा जाती रही और जेलका डर उठ गया है। देशके सब लोगोंसे इस समय एक ही प्रकारकी आवाज़ सुनाई देती है—"दुनियामें महात्मा गांधीका बिलकुल अनोखा परीक्षण है।" इस परीक्षणमें 'अहिंसा' का नियम परीक्षाकी कसौटीपर रखा जा रहा है। इस नियमकी विजय महात्मा गांधीकी सफलता है। यदि यह परीक्षण सफल हुआ तो जातियोंका भविष्य इतिहास और संसारका ढांचा अनोखे ढंगका हो जायगा।

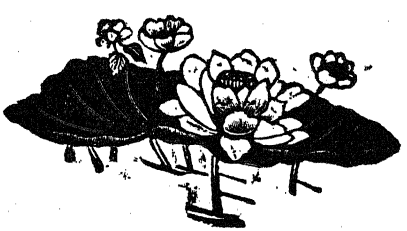

# दो प्रश्नोंका उत्तर

मेरे विचारोंके सम्बन्धमें दो बड़े आक्षेप मुझपर किये गये हैं। एक तो यह कि अपनी भाषामें शिक्षा देनेके विषयमें मेरी स्थिति बड़ी निर्बल है। गवर्नमेण्ट तो स्वयं चाहती है कि अंग्रेज़ी स्कूलोंको कम कर दिया जाय और कालिजोंकी शिक्षाको भी अधिक उन्नति न प्राप्त हो। कारण यह कि यह गवर्नमेंटका विचार है कि यह सब आन्दोलन अंग्रेजी शिक्षाके फैलनेका परिणाम है और आन्दोलनको दबानेके लिये अंग्रेजी शिक्षा कम कर देनी चाहिये।

दूसरा आक्षेप यह है कि क्या मैं चाहता हूं कि सारी शिक्षा उस ढङ्गपर हो जैसे कि लाहोरके "ओरियंटल कालिज" में विद्यमान है। मेरे वर्णन की हुई पद्धतिका एक नमूना तो गवर्नमेण्टकी ओरसे बनाया हुआ वर्तमान है कि इसकी अवस्था देखकर भी मैं इस तरहके विचारोंका प्रकाश कर सकता हूं। इसी तरह पञ्जाबके लोगोंने कई गुरुकुल बनाकर इस ढंगपर कार्य करनेका यत्न किया है। इसमें क्या कृतकार्यता हुई है?

क्योंकि यह प्रबल आक्षेप हर एक व्यक्तिके मनमें पैदा हुआ होगा अतः मैं इस जगह उसका उत्तर देना आवश्यक समझता हूं। मैं माननेको तय्यार हूं कि गवर्नमेण्टके दृष्टिकोणको प्रकट करनेकी मुझमें बहुत योग्यता नहीं है परन्तु मैं इतना कह सकता

हूं कि गवर्नमेंटका विचार यह है कि देशमें शिक्षा उस मात्रा तक फैलनी चाहिये जिसे कि वह सुगमतासे अपने वशमें रख सके। यदि शिक्षितोंकी अधिक संख्या नौकरीकी खोजमें या जीविकासे निराश होकर इधर उधर फिरेगी तो गवर्नमेंटके लिये भयका कारण होगी।

सम्भव यह भी है कि कई न्यायप्रिय अधिकारी वर्तमान शिक्षाके मूल दोषोंको अनुभव करके इसे स्वाभाविक और उचित दशामें करना चाहते हों और वह शिक्षाको मातृभाषामें दिलानेके पक्षमें सम्मति रखते हों। इससे भी अधिक सम्भव यह है कि वर्त्तमान आन्दोलनको शिक्षित समुदायके नेतृत्वमें फैलता हुआ देखकर वह शिक्षाको इसका उत्तरदाता ठहराते हों। परन्तु हमें याद रखना चाहिये कि ऐसे पेचीदा मामिलेमें गवर्नमेंट भी यही भूल कर सकती है जैसा कि आर्यसमाज या कोई एक व्यक्ति चाहे वह कितना ही योग्य हो। यद्यपि जहांतक मैं समझता हूं गवर्नमेंट अपनी दृष्टिसे ठीक मार्गपर है। गवर्नमेंटकी यह इच्छा है कि शिक्षा अंग्रेज़ी भाषाके माध्यमसे परिमित होकर फैलाई जावे और वह भी विशेष सीमाओंसे न बढ़ने पावे। अंग्रेजी भाषाकी पुस्तकों द्वारा निस्सन्देह हम वर्त्तमान युगके नये पोलिटिकल विचारोंका अध्ययन कर सकते हैं। परन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि यदि ये ही विचार अपनी भाषाके द्वारा प्रकट किये जायं तो अधिक सर्वप्रिय न बनगे। गवर्नमेंटकी शिक्षा—सम्बन्धी नीतिका पता अख़बारोंसे लग

सकता है। जिस लेखको गवर्नमेंट अंग्रेजी पत्रोंमें छपनेकी सम्मति दे सकती है वही 'वर्नाक्युलर' अख़बारोंके लिये भयावह समझे जाते हैं। शिक्षा एक दुधारी तलवार है। गवर्नमेंटके लिये लाभदायक भी हो सकती है लेकिन वैसे ही हानिप्रद भी हो सकती है।

किन्तु यह विचार सर्वथा अशुद्ध है कि यदि वर्त्तमान शिक्षा न होती तो देशभक्ति न होती, या कोई हलचल न होती। हर समय और हर देशमें कुछ संख्या ऐसे व्यक्तियोंकी होती है जिनके अन्दर देशभक्तिका भाव पाया जाता है। शिवाजी और मरहठोंकी हलचल अंग्रेजी शिक्षाका परिणाम न थी। राणा प्रतापने अंग्रेजी नहीं पढ़ी थी और न गोविन्दसिंह ही अंग्रेजी जानते थे। 'इण्डियन नेशनल कांग्रेस, अंग्रेज़ी शिक्षितोंका आन्दोलन है परन्तु अब तीस सालके बाद कांग्रेसने पोलिटिकल प्रचारका काम शुरू किया है। इससे पहिले तो कांग्रेसका केवल इतना काम रहा है कि साल भरके बाद जनताकी शिकायतें गवर्नमेंट तक पहुंचा दे। और कांग्रेसने इस दृष्टिमें गवर्नमेंटकी सेवा की है और कर रही है कि आन्दोलन करनेका ढङ्ग बदल दिया है। इसके स्थानमें कि गवर्नमेंटके विरुद्ध कोई गुप्त बेचैनी फैले यह खुले तौरपर लोगोंके दिलोंकी अवस्था गवर्नमेंटके सामने रख देती है। यदि अंग्रेज़ी अख़बारोंके स्थानपर तब अख़बार देशी भाषामें होते और हमारी सारी पुस्तकें अंग्रेज़ीके स्थानमें देशी भाषा होतीं तो शिक्षाका प्रचार वर्त्तमान अवस्थासे

कई गुना बढ़कर होता । साधारण लोग सदा कार्यकारणके समझनेमें बड़ी भूलसे काम लेते हैं। दो बातोंको एक जगह देखकर झट कह देते हैं कि वह एक दूसरेका परिणाम है। जैसे आर्यसमाज है, यह अधिकतर शिक्षित समुदायमें फैला है इसलिये यह परिणाम निकाला जाता है कि अंग्रेज़ी शिक्षाने आर्यसमाजके फैलानेमें सहायता दी है। यह परिणाम झूठा और बेहूदा है। यदि अंग्रेज़ी शिक्षा समाजके फैलानेमें सहायक होती तो बंगाल और बम्बईमें समाज क्यों नहीं फैला जहां कि शिक्षाका अधिक प्रचार है ? आर्यसमाज केवल स्वामी दयानन्दके विचारोंके प्रचारका परिणाम है। चूंकि स्वामी दयानन्दका काम शहरोंमें था और यहांपर शिक्षित लोग गिरकर धर्मसे विश्वास हटा रहे थे उन्होंने स्वामी दयानन्दका आश्रय लिया और शहरोंमें ही प्रचार अधिक किया। समाज शिक्षित समुदाय ही तक कुछ सीमाबद्ध न रहा जहां कहीं और जब कभी देहातमें प्रचार किया गया वहां भी समाज वैसे ही ज़ोरसे फैला। क्योंकि कांग्रेसको अभीतक वकील लोग चलाते रहे इसलिये यह परिणाम निकालना कि वकील या बैरिस्टरोंकी सहायताके बिना कांग्रेस न चल सकेगी, ग़लत है। जहां तक वे चला सकते थे, उन्होंने चलाया। जब कांग्रेस इनके प्रोग्रामसे बढ़ गई और वे पीछे रह गये तो दूकानदार या स्वतन्त्र जीविका रखनेवाले लोग इसे चलाने लगे। इसी प्रकार यह ठीक नहीं है कि अंग्रेज़ी शिक्षाका वर्त्तमान ऐजीटेशन वा हलचलसे कोई स्थिर सम्बन्ध

है। इसका बन्द होना या जारी रहना और अवस्थाओंपर निभर है। जैसे किसी धर्मका फैलना केवल समाजके आत्मिक बल-पर निर्भर होता है और यदि जीवन पर्याप्त हो तो धर्म फैलेगा नहीं तो सारे उपाय व्यर्थ हो जाते हैं। भाषाके विषयमें मैं चकित होता हूं कि हमारे बैंक अपना व्यवहार अंग्रेज़ी भाषामें करते हैं। इससे बढ़कर लोग चिट्ठियां भी अंग्रेज़ीमें लिखते हैं। मुझे एक घटना कभी नहीं भूलती—मैं अमरीकामें एक कुटुम्बके साथ रहता था। वहां एक छः सात वर्षका बच्चा था, मेरे देशकी चिट्ठी वहां पहुंची। वह दौड़कर चिट्ठी देखनेके लिये आया। चिट्ठी देखकर वह बोला—ओ! यह अङ्गरेजीमें है, तुम्हारी अपनी कोई भाषा नहीं? उसे एक नयी भाषा देखनेकी अभिलाषा हुई थी। दूसरा प्रश्न ओरियंटल कालिज और गुरुकुलके सम्बन्धमें है। इन दोनोंके लिये मेरा उत्तर यह है कि ये दोनों संस्थायें शिक्षाप्रणालीके ढङ्गके तौरपर नहीं चलाई गईं। इनमेंसे पहिलेका उद्देश्य केवल पण्डितों, मौलवियों आदिके लिये एक शिक्षालय स्थापित करना, और उनको सरकारी उपाधियोंके लालचमें लाना है। जहांतक इसके कामका क्षेत्र है वह अपना काम करता है। इस परीक्षाके पास हुए लोगोंको हम बहुत सम्मानकी दृष्टिसे नहीं देखते। कारण यह कि शिक्षाका उद्देश्य हम सांसारिक पदका प्राप्त करना समझते हैं और केवल संस्कृत या अरबीकी शिक्षासे अङ्गरेजी राज्यके अधीन कोई पद प्राप्त नहीं होता। उच्च न्यायालयोंमें कानून अङ्गरेजीमें है। अंग्रेजी जाननेवाले

वकील वहां मान और प्रतिष्ठा पाते हैं। स्कूलों और कालिजोंमें अंग्रेजीका अधिकार है। वहां इन बेचारोंकी कोई पूछ नहीं। हिन्दू राज्य था, पण्डितोंका मान था। मुस्लिम राज्य था, मौलवी लोग विशेष स्थान रखते थे। आज वह स्थान वकीलोंको प्राप्त है। इनमेंसे यदि कोई अन्धा भी वकील बन जाता है, वह भी सम्मानके योग्य होता है। 'ओरिएण्टल कालिज' गवर्नमेंट कालिज और यूनिवर्सिटीकी छत्रछायामें इस तरह नहीं बढ़ सकता जैसे एक पौदा बड़े वृक्षकी छायाके नीचे फलता फूलता नहीं।

गुरुकुलका उद्देश्य ब्रह्मचारी आदि पैदा करना था जिससे इस समय मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। यदि यह परीक्षण एक शिक्षा-प्रणालीकी दृष्टिसे किया जाता तो इसका चलाना सादे ढङ्गपर और थोड़े ख़र्चपर किया जा सकता और इस अवस्थामें इतने रुपयेसे कई स्थानोंमें इस प्रकारके स्कूल स्थापित किये जा सकते थे। जब ब्रह्मचर्यको पुष्टि देना उद्देश्य हो तो आवश्यक है कि कुछ विद्यार्थी बचपनसे एक पृथक् स्थानपर विशेष निरीक्षणमें रखे जायँ और केवल इन कुछ विद्यार्थियोंके लिये जिनकी संख्या प्रति श्रेणी दससे अधिक नहीं पूरा शिक्षक वर्ग (staff) रखकर बड़ा भारी खर्च किया जावे। इसके मुकाबलेपर शिक्षाप्रणालीका परीक्षण करना बिलकुल और चीज है। वर्त्तमान शिक्षाप्रणालीमें एक स्कूल या कालिज स्थापित होता है इसके विद्यार्थियोंका घेरा (दायरा) कितना विस्तृत है। सारे सूबेमें हजारों प्राइमरी स्कूलों-मेंसे लड़के परीक्षाओंकी चक्कीके द्वारा पिसते हुये मिडिल स्कूलों-

में आते हैं। वहां कुछ कृतकार्य होकर कालिजोंमें आते हैं। जो लड़के कालिजसे एफ० ए० या बी० ए० पास करते हैं वे सारे प्रान्तकी शिक्षाप्रणालीका इत्र होते हैं और उनपर सरकारका लाखों करोड़ों रुपया खर्च होता है। इनका क्या मुकाबला किया जा सकता है उन कुछ विद्यार्थियोंसे जो कि एक ही स्थानपर रहकर उन्हीं अध्यापकोंके नीचे अपनी शिक्षा समाप्त करते हैं। फिर भी जो नौजवान गुरुकुलसे निकले हैं वे कभी भी निराशा देनेवाले नहीं। बहुत उत्तम हो यदि गुरुकुल एक मध्यस्थ यूनिवर्सिटीका काम दे और स्कूलतककी शिक्षाके लिये भिन्न स्कूल या शाखायें स्थापित की जायं।

# हमारी कन्याओंकी शिक्षा।

श्री लाला हंसराजजीने पञ्जाबमें एक नारी विश्वविद्यालय स्थापित करनेका प्रस्ताव उपस्थित करके पञ्जाबकी जनताका ध्यान एक अत्यन्त महान और आवश्यक कर्तव्यकी ओर खींचा है। थोड़े समयमें जो विचार इस विषयपर प्रकट किये गये हैं इनसे तीन चार प्रश्न हमारे सामने विचारके लिये पैदा होते हैं। प्रस्तावके इस भागपर तो सर्वथा एक मत प्रतीत होता है कि अपनी कन्याओंको वर्त्तमान शिक्षा-प्रणालीकी चक्कीमेंसे गुज़ारना हमारे लिये पतन और लज्जाका स्थान है। अपनी कन्याओंकी शिक्षा हम सुगमतासे अपने हाथोंमें ले सकते हैं और इसके लिये हमें एक स्वतंत्र यूनिवर्सिटीकी नींव डालनी चाहिये जोकि स्त्री-जातिकी शिक्षाके विषयपर विचार करके उचित योग्य शिक्षाप्रणाली प्रचलित करे और काल और अनुभवके अनुसार इसमें परिवर्तन करती रहे। मौलिक सिद्धान्तोंको स्वीकार करते हुए जिन पहलुओंसे प्रस्तावपर समालोचना की गयी है उन्हें मैं विचारनेके लिये पाठकोंके सामने रखता हूं। सबसे पहली बात तो यह है कि आजकल सारे देशके सामने असहयोग (Non-co-operation) के अनुसार राष्ट्रीय शिक्षा देनेका सिद्धान्त उपस्थित है और महात्माजीकी इस तजबीज़को हाथमें ले लेनेसे लड़कोंके स्कूल और कालिज

यूनिवर्सिटीसे पृथक् करनेका प्रश्न पीछे पड़ जायगा। इसलिए अभी तो कन्याओंकी शिक्षाका प्रश्न स्थगित कर देना चाहिये। निस्सन्देह यह ठीक है कि शिक्षाको स्वतंत्र करनेका विचार बड़े जोरसे देशके सामने उपस्थित है। परन्तु साधारण लोग इसे केवल विचार मात्र तकही लेजानेके लिये तय्यार हैं। हर एक व्यक्ति तत्काल स्वीकार कर लेता है कि हमारी शिक्षामें बहुत बुराइयां हैं और असहयोगके पक्षमें हाथ खड़ा कर देता है किन्तु जब काम करनेका समय आता है तो वह न स्वयं आचरण करनेके लिए तय्यार होता है और न अपने लड़केको तय्यार करता है। कई सिद्धान्त पाये जाते हैं जिनका प्रभाव अत्यन्त सीमित है।

यदि पञ्जाबके लोग अपनी शिक्षा स्वतंत्र करनेको तय्यार हैं तो इसके लिए कोई नया चन्दा जमा करनेकी आवश्यकता नहीं। पञ्जाबमें हिन्दू, सिक्ख और मुसल्मान जनताके चन्दोंसे इतने कालिज और स्कूल स्थापित किये हुये मिलते हैं कि इनकी सहायता पर अत्यन्तही महान और शानदार यूनिवर्सिटी खड़ी की जा सकती है। और तो और, यदि केवल आर्यसमाजकी छोटीसी समुदाय चाहे तो अपनी एक अन्य यूनिवर्सिटी स्थापित कर सकती है। परन्तु यह तब हो सकता है जब जनता इन कालिज और स्कूलके कार्यकर्ताओंको बाधित करे कि वे ऐसा करें। जबतक इनके ढांचे (Constitution) के अनुसार समाजों और कमेटियोंपर दबाव डालकर ऐसा न कर दिया

जायगा लड़कोंकी शिक्षा स्वतन्त्र न होगी। यह काम उन लोगोंका है जो कि असहयोगके प्रोग्रामको अपना एक मात्र उद्देश्य समझ बैठे हैं।

यह ठीक है कि यदि महात्मा हंसराज चाहें तो वे इसपर अपना दबाव डाल सकते हैं परन्तु यदि वे इसे न करने योग्य समझते हों तो उन्हें किस तरह बाधित किया जा सकता है। वह इस सिद्धान्तको उच्च मानते हैं इसका प्रमाण यही है कि वे स्त्री-जातिकी शिक्षाको यूनिवर्सिटीसे सर्वथा स्वतन्त्र कर देनेपर कटिबद्ध हुये हैं। वे लड़कोंकी शिक्षाके बारेमें भी कदम उठानेपर तय्यार हो जावेंगे, यदि लड़कोंके मातापिता अपने दिलोंसे यह इच्छा निकाल दें कि उनके लड़के वकील बनें, इञ्जीनियर बनें, या दूसरी सरकारी पदवियोंके लिये यत्न करें। इनका उत्तर तो केवल यह है कि जहांतक लड़कोंका सम्बन्ध है, लोगोंकी शिक्षा बिलकुल सांसारिक है और यह सांसारिक स्वार्थवाली शिक्षा हमारी कन्याओंके सर्वथा प्रतिकूल है। इस लिये हमें इतना तो शिक्षाको स्वतंत्र कर देना चाहिये जितना कि सुगमतासे हम कर सकते हैं।

हम इसमें इनकी सहाता करें वा नहीं? जो उनसे दस कदम आगे चलने वाले हैं उन्हें भी इनकी सहायता करनेमें कोई आक्षेप न होना चाहिये। इससे इनके आगे बढ़नेका कदम रुकता नहीं है प्रत्युत इनके सिद्धान्तकी विजय ही होती है। यह आक्षेप कि यदि लड़के गिरानेवाली शिक्षा प्राप्त करेंगे तो लड़कि-

योंको जातीय शिक्षा देनेसे लाभ न होगा कुछ बहुत बल नहीं रखता। साधारणतः यह ठीक विचार है कि हमारी पिछली शताब्दियोंकी उथल पुथलमें हमारी स्त्रियोंने हमारे धर्मकी जो रक्षा की है, अब भी मैं यह समझता हूं कि यद्यपि हमारे नौजवान कई दशाओंमें जातीयतासे गिराने वाले प्रभावोंके नीचे दब जायंगे, हमारी कन्यायें और हमारी मातायें हमारी डूबती किश्तीको बचानेमें कृतकार्य होंगी।

दूसरा पहलू ध्यान देने योग्य यह है कि क्या यह यूनिवर्सिटी सामाजिक संस्था होगी या हिन्दुओंकी, या हिन्दुओं और सिक्खोंकी, या हिन्दू, सिक्ख और मुसलमानोंकी ?

यदि इसे एक परीक्षावाली यूनिवर्सिटी बनाना है, जैसा कि हिन्दुस्तानकी सरकारी यूनिवर्सिटियां हैं, तब तो बड़ी सुगमतासे यह सब श्रेणियोंके लिये मिश्रित या सम्मिलित जातीय यूनिवर्सिटी बनायी जा सकती है। इस अवस्थामें यूनिवर्सिटीके संचालक भिन्न २ विषयोंपर हिन्दी गुरुमुखी और उर्दूमें पाठ विधि ( Course ) तैयार कर सकते हैं जोकि सब स्कूलोंमें प्रचलित हों और इनमें परीक्षायें लेकर प्रमाणपत्र ( सार्टिफ़िकेट ) दे दिये जायं। परन्तु यदि यूनिवर्सिटी बनानी है तो फिर कई क्रियात्मक कठिनाइयोंका सामना करना पड़ेगा। प्रबन्ध सम्बन्धी मामलोंमें ज़रा २ सी भिन्न सम्मतिपर हमारे झगड़े पड़ जाते हैं।

हिन्दी, गुरुमुखी, उर्दूके द्वारा शिक्षा देनेके लिये अलग अलग

अध्यापक वर्ग ( Staff ) रखना जरूरी होगा। अर्थात् एक यूनिवर्सिटी तीन भिन्न २ विभागोंमें विभक्त हो जायगी। इसमें प्रश्न होगा कि वहां विशेष अधिकार किसको होगा ?

एक ढंग यह भी हो सकता है कि जहांतक शिक्षाका सम्बन्ध है भिन्न २ समुदायोंके लोग अपने स्कूल और कालिज स्वयं चन्दा करके अपने हाथमें रखें और अपनी धार्मिक शिक्षा-का भी साथ प्रबन्ध रखें। केवल परीक्षाका अधिकार यूनिव-र्सिटीको प्राप्त हो। उदाहरणके लिये हिन्दुओंको तो विशेष आवश्यकता होगी कि अध्यापिका उत्पन्न करनेके लिये हिन्दू विधवाओंकी श्रेणीको इस उद्देश्यके लिए दृष्टिमें रखें। मुसल-मानोंमें ऐसी विधवायें उपस्थित ही नहीं। हिन्दुओंका अपनी दुःखी विधवाओंकी सहायता करना एक विशेष कर्त्तव्य है। तीसरा पहलू यह है कि यह यूनिवर्सिटी कहांपर स्थापित हो ? इस सम्बन्धमें कन्या महाविद्यालय जालन्धरकी ओरसे स्वाभा-विक अभिलाषा हो सकती है कि इस विद्यालयको यूनिवर्सिटी बनाया जाय। किसी व्यक्तिको विरोध नहीं हो सकता कि लाला देवराजजी पंजाब स्त्री-शिक्षाके अगुआ हैं और प्रान्तके सब लोग उनकी सेवाओंका मान करते हैं परन्तु मैं नहीं समझ सकता कि कन्या महाविद्यालयके कार्यकर्ताओंको यूनिवर्सिटीके लाहौरमें स्थापित होनेपर क्या आक्षेप हो सकता है ? इन अव-स्थाओंमें भी कन्या महाविद्यालय जालन्धर यूनिवर्सिटीके साथ सम्बन्ध रखनेवाला सबसे बड़ा कालिज बनाया जा सकता

है। लाहौरमें यूनिवर्सिटीका होना इसलिये अच्छा है कि लाहौर साधारणतः शिक्षाका केन्द्र है और शिक्षा-सम्बन्धी विषयोंपर सम्मति रखनेवाले लोग अधिक संख्यामें सदा लाहौरमें मिला करेंगे। जालन्धरको यूनिवर्सिटीका मुख्य स्थान ( Head quarer ) बनानेके यह अर्थ हैं कि महात्मा हंसराज या लाला लाजपतरायजी या जो कोई और इस प्रस्तावको क्रियात्मक रूप देना चाहते हैं, जालन्धरमें रहें। दूसरी विधि यह है कि जालन्धर कन्या महाविद्यालयकी कमेटी भी यूनिवर्सिटीके साथ अपना सम्बन्ध पैदा करे और सारे पंजाबके अन्दर स्त्रियोंकी शिक्षाकी एक स्वतन्त्र और समान रीति पैदा हो जाय। लाहौरमें यह यूनिवर्सिटी महाविद्यालय जालन्धरकी कोई रचना सम्बन्धी प्रतिद्वन्दी नहीं होगी प्रत्युत उन्हें प्रसन्न होना चाहिये कि इससे उनके मिशनकी अधिक पुष्टि होगी।

इस समय उत्तम यही है कि लाहौर समाजके जल्सेके समयपर या किसी और समीपकी तिथिपर स्त्रियोंकी शिक्षामें अनुराग लेने वाले सज्जनोंकी एक कान्फ्रेंस कर ली जाय ताकि इसके भिन्न २ पहलुओंपर विचार किया जा सके।

## काला पानी

### ( अंडमान द्वीप समूह )

लगभग ४॥ वर्ष तक मेरा सम्बन्ध अंडमान द्वीपसे रहा है। जब जेल कमीशन वहांपर जांचके लिये गया तो हमारे मुकद्दमेके

कई सभासदोंने अपने सम्पूर्ण बयान लिखकरके कमीशनकी सेवामें प्रस्तुत किये। दैवयोगसे ऐसा हुआ कि मुझे उस समय अपनी सम्मति प्रकट करनेका अवसर न मिला इसलिये मुझे कुछ अनुचित नहीं मालूम होता यदि मैं इस समयपर अपने विचार प्रकट करूं।

आपने वहांके पोलिटिकल कैदियोंके विषयमें लिखा है—मेरी प्रार्थना है "बजाय इसके कि आप उसके स्वरूपका सख्तीसे वर्णन करें गवर्नमेंटसे यह बारबार प्रार्थना करें कि इन्हें राजकीय घोषणाका फ़ायदा दिया जाय" अर्थात् पंजाब और संयुक्त प्रान्तके दो मुसल्मान बर्मामें दंडित हो रहे हैं, बर्मा गवर्नमेंटका ध्यान दिलाना विशेष आवश्यक है"। आपने लिखा है "कि इसका (कालेपानीका) जारी रहना गवर्नमेंटके नामपर एक काला धब्बा है। हम चाहते हैं कि यह काला धब्बा ब्रिटिश गवर्नमेंटके माथेपरसे जल्दी धुल जाय"।

मैं इस विषयकी पुष्टिमें निम्नलिखित युक्तियां प्रस्तुत करता हूं:—

(१) गवर्नमेंटका लिखित परन्तु स्थिर तौर पर माना हुआ नियम चला आता है कि प्रत्येक सरकारी पब्लिक संस्था स्वास्थ्यप्रद स्थानपर स्थापित की जाय। कालेपानीकी स्थापनामें इस नियमकी कुछ भी परवाह नहीं की गयी प्रत्युत ठीक इसके विरुद्ध कार्य किया गया है। सब मेडिकल अफ़सर इस बातपर एकमत हैं कि इन द्वीपोंकी जलवायु अत्यन्त स्वास्थ्य नाशक है।

बल्कि मृत्यु संख्याके हिसाबसे भी यही सिद्ध होता है कि यद्यपि दुर्बल, बीमार, और आयुमें अधिक (४० सालकी उमरके ऊपरके) व्यक्ति वहां जानेके अयोग्य समझे गये हैं-अंडमानके कैदियोंकी मृत्यु भारतके जेलखानोंकी मृत्यु संख्यासे दुगनेसे भी अधिक होती है। अंडमान द्वीप मलेरिया और पेचिशका घर है। यद्यपि मैं इतने कालमें शायद ही बीमार हुआ परन्तु फिर भी मेरी शारीरिक दशामें अत्यन्त कमज़ोरी है। इस बातका वे ही लोग अनुमान लगा सकते हैं जिन्होंने पहले मुझे देखा था। जहांपर जन्म भरका कैदी देशके जेलमें क्षमा आदि मिलनेपर बारह तेरह सालमें छूट जाता है वहां पहले तो अवधि ही २० सालके लगभग होती है दूसरा स्वास्थ्य ऐसा हो जाता है कि १० साल जीनेवाला ५ साल कठिनतासे जीवित रहता है।

(२) आर्थिक दृष्टिसे भी बहुत घाटेपर होनेसे गवर्नमेंट पर इसका बड़ा भारी अनुचित बोझ पड़ता है। एक तो खाने-पीने आदि मनुष्योंकी आवश्यकताओंके सब सामान जहाज द्वारा वहां लाकर जमा रखना पड़ता है। जितने अफ़सर वा कर्मचारी हैं उनको स्थानके अत्यन्त दूर और ख़राब होनेके कारण अधिक वेतन दिया जाता है इसपर भी कैदियोंका प्रबन्ध भारतके जेलखानोंकी अपेक्षा कई गुना बुरा है। क्योंकि अफ़सर यों तो केवल निरीक्षणका काम करते हैं वास्तवमें प्रबन्ध सब खर्चको कम करनेके लिये कैदियोंमेंसे चुने हुए व्यक्तियोंके हाथमें रहना चाहिए।

जिन लोगोंको जेलख़ानेमें जानेका अवसर प्राप्त हुआ है उन्हें

मालूम है कि कितने अत्याचार और खराबी जेलोंमें इस कारणसे होती है कि इनके कर्मचारी और साधारणतया देशी अफ़सर भी आवश्यक शिक्षासे रहित और नीच जातिसे लिये जाते हैं। यह खराबियां कहांतक बढ़ जायंगी जब कि उनके स्थानपर प्रबन्ध करनेवाले वे लोग हों जो कि घातक जूयेबाज़ और डाकू रह चुके हों और सदाचार सम्बन्धी शिक्षा तो इनके पास कभी फटकी भी न हो। साथ ही यह भी याद रखना चाहिए कि जिन कैदियोंको उन्नति देकर यह उत्तरदायित्व दिया जाता है वे साधारणतया अच्छे स्वभाववाले नहीं हो सकते क्योंकि ऐसे आदमी कैदियोंको प्रबन्धमें रखनेसे घबराते हैं और इसके लिये आवश्यक खुशामद और आज्ञा माननेसे निषेध नहीं करते हैं और न इनका चुनाव ही किया जाता है। और हो जाने पर वे जल्दी हटा दिये जाते हैं। इस उत्तरदायित्वको सफलतासे सँभालने-वाले कैदी प्रायः बड़े चालाक, स्वार्थी, खुशामदी और कमज़ोरों-को दबाकर अपनी अनुचित वासनाओंको पूरा करने वाले होते हैं। अधिकतर पठान और सिन्धी आदि ये काम करते हैं।

## भाषाकी कठिनता

(३) कालेपानीमें भारतके भिन्न भिन्न प्रान्तोंसे कैदी आते हैं—मद्राससे कैदी यहां आते हैं-आसाम प्रान्तसे यहां भेजे जाते हैं—पेशावरके सीमोत्तर प्रान्तसे यहां जाते हैं। खुर्दरीसी प्रकारकी हिन्दुस्तानी भाषा कालेपानीकी भाषा है। लगभग आधी संख्या

इसको बोलना नहीं जानती जब नये कैदी आते हैं तो उनसे काम लेनेवाले हिन्दुस्तानी भाषामें उनसे काम लेते हैं। उनको यह बात याद नहीं रहती कि नये आदमी उनकी आज्ञाओंको समझ ही नहीं सकते। इसलिये जबतक कि वे भाषा समझनेके योग्य नहीं होते विविध प्रकारके कई अनुचित कष्ट सहते हैं। किसी कैदीको अपने देशसे निकाल करके दूसरी भाषा सीखनेकी आवश्यकतापर बाधित करना स्वयं ही एक दुःख है किन्तु जंगली स्वभावके कैदियोंके नीचे रहकर ऐसी अवस्थामें काम करना अत्यन्त ही अनुचित कठोरता है।

(४) दण्ड देनेका उद्देश्य न्याय या दया दोनों विरुद्ध गुण समझे जाते हैं क्योंकि जहांतक किसी अपराधीको न्यायके अनुसार दण्ड दिया जाय तो सोसाइटीके दूसरे निरपराधोंपर अत्याचार है और उनके बिना सोसाइटी चल ही नहीं सकती परन्तु यदि कोई मनुष्य विशेष अवस्थाओंमें जोश या लालचमें आकर दोष करनेका भागी बनता है तो दूसरे मनुष्यके अन्दर स्वाभाविक रीतिसे एकबार तो इसके लिये सहानुभूति और दया-का भाव उत्पन्न हो जाता है। सब धर्म, और मनुष्यका स्वभाव दया और क्षमाको एक बड़ा पवित्र दर्जा देते हैं। प्रश्न यह है कि न्याय और दयाको एक स्थानमें किया जा सकता है वा नहीं?

ज्यों ज्यों सभ्यता और मनुष्योंमें सहानुभूतिका भाव उन्नति करता जाता है, कानून बनानेवालोंका यत्न यही है कि अपराध-के दंड देनेमें दोनों गुणोंसे काम लिया जाय। इसलिये कानूनी

न्यायका लिहाज़ रखते हुए जहां एक अपराधीसे अपने इष्ट मित्रोंसे मिलनेकी प्रसन्नता और अपने लिये कमाकर खानेपीने, खर्च करनेकी स्वतन्त्रताको छीन लिया जाता है वहां यह आवश्यक है कि उसपर दयादृष्टि रखकर उसे अपनेको सुधारनेमें सहायता दी जाय। अंडमनमें इस बातका कोई विचार नहीं रखा जाता। वहां तो केवल एक ही उद्देश्य रखा गया है कि जहांतक हो सके कैदीसे सरकारी काम लिया जा सके। उसके ऊपर सारे उत्तम गुण दया, सदाचार और मनुष्योंकी सहानुभूतिको बलिदान कर दिया जाता है। दूसरे देशके जेलोंके अन्दर भी ऐसा होना सम्भव है परन्तु यहां तो इसको अत्यन्त अधिकता है। काम करनेवाले वा दूसरोंसे काम लेनेवाले कैदी दूसरोंपर कितना ही अत्याचार करें, जूआ खिलवायें कैसी ही सृष्टि विरुद्ध दुराचारके दोषी हों; इनकी उपेक्षा की जाती है।

## अपराधोंकी बढ़ती

(५) न केवल यह कि अंडमानमें कैदीका सुधार या आचरण सम्बन्धी उत्तमताका कोई सामान है प्रत्युत इसके विपरीत इससे भिन्न प्रकारके अपराधोंकी अत्यन्त उन्नति है। यों तो जेलोंमें भी यह दोष विद्यमान है कि बहुतेरे पहिली बारके दंड पाए हुये कैदी जेलमें कुसंगतिके प्रभावसे बड़े पक्के अपराधी बनकर निकलते हैं परन्तु अंडमानमें चूंकि जेलके बाहर रहनेसे थोड़ी स्वतंत्रता मिलती है और निन्दित अपराध

करनेवालोंका संख्या अधिक होनेसे दूसरोंके लिए नाशका पूरा सामान उपस्थित है। निर्वासनके दंडका अभिप्राय यह है कि अंडमानमें निर्वासित करके कैदीको जेलसे बाहर थोड़ी स्वतंत्रतामें रखा जाय। इन निर्वासितोंके अन्दर पर्याप्त संख्या तो ऐसे लोगोंकी है जो कि कुत्सित अपराधोंसे भी सर्वथा परिचित नहीं होते। मैं वैयक्तिक तौर पर एक ऐसे व्यक्तिको जानता हूं जिनके एक सम्बन्धीसे हत्या हो गई और इनके विरोधियोंने झूठे गवाह पैदा करके इनको दण्ड दिलवा दिया। प्रत्युत वे ख़ून करनेकी जगह झगड़ा मिटाते थे। ऐसे लड़कोंका उदाहरण मैं जानता हूं जिन्होंने अदालत बनाकर किसी लड़के अपराधीको फांसीका हुक्म सुनकर रस्सी गलेमें डाल दी और स्वयं कालेपानीका दंड भोग रहे हैं। बच्चोंने खेलते हुए एक दूसरेको कुयेंमें गिरा दिया और मृत्यु हो गई। इस अज्ञानताके अपराधमें वे कालेपानीमें हैं। ऐसे नौजवान जो कि बुरी संगतिमें पड़कर डाकुओंके झुंडके साथ चले गये और गिरोहबन्दीके कानूनसे पहली भूलमें ही अपराधीके बहानेपर कालेपानीमें पड़े हैं। इनके साथ ऐसे अपराधी-पेशा निर्वासित भी हैं जो कि जीवनको दूसरोंकी जान और माल लेनेमें गुज़ारते हैं। इन लोगोंको स्वतंत्रता प्राप्त होनेसे ये पहली प्रकारके लोगोंको बिगाड़कर अपने जैसा बनाते हैं। पहली प्रकारवाले लोगोंको कालेपानी भेजना बड़ी गलती है। दूसरी प्रकारको भी किसी तरह स्वतंत्रता न देनी चाहिये इसलिये कालापानी इनके लिये भी सर्वथा योग्य नहीं है।

( ६ ) प्रकृति विरुद्ध दुराचार—यों तो दुराचार जेलोंमें बहुत पाया जाता है जिसके रोकनेका एक उपाय यह है कि जहां कहीं कोई पठान कैद हो उसे पेशावरमें ही रखा जाय और पेशावरसे पठानोंका चालान पञ्जाब और यू० पी० में सर्वथा बन्द कर दिया जाय। ये दुराचार अंडमानमें इतने अधिक हैं कि कमीशनके मेम्बर आश्चर्यमें पड़ गये। इसका कारण यह है कि संयुक्त प्रांतकी अधिक संख्या और बम्बई, मद्रास आदिसे भी बच्चोंकी पर्याप्त संख्या वहाँ जाती है। बर्माके लोगोंको ३० वर्ष तककी आयुमें भी दाढ़ी मूँछ नहीं आती और बर्माके बच्चे भी वहां बहुत भेजे जाते हैं। बर्माके लोग बहुत सादे और सरल स्वभावके होते हैं। इनके अन्दर ये दुराचार पाये नहीं जाते इसलिए इनके दिलोंमें ऐसे बड़े आदमियोंसे घृणा भी नहीं पाई जाती। वे सुगमतासे बदमाशोंके पञ्जेमें फँस जाते हैं। उन्हें 'स्त्रियां' कहा जाता है। इधरसे पञ्जाब, पेशावर, सिन्ध और दूसरे प्रान्तोंके दुराचारी बदमाश, खूनी लोग भी अधिक हैं। देशनिकालेमें स्वतन्त्रता होनेसे अगणित अवसर इस बुराईके मिलते हैं जो कि जेलोंमें मिलने असम्भव हैं। इनको रोकनेके लिये अब प्रयत्न हो रहा है कि विवाहित कैदी अपनी अपनी स्त्रीको वहां मँगवायें। कैदी लोग इसे सर्वथा पसन्द नहीं करते। वे कहते हैं कि हम तो निर्वासित हो गये हैं। हम अपने घरवालोंको क्यों निर्वासनमें ले आएं? यदि भगवान् मिलायेगा तो वापिस जाकर मिल लेंगे। इस बुराईका वहांपर सुधार करना सर्वथा असम्भव है।

केवल एक ही उपाय लाभदायक हो सकता है कि इन सबको अपने अपने प्रांतोंमें अपने लोगोंके अन्दर रखा जावे।

अण्डमानमें क्योंकि नारियल गन्ना वा लकड़ी अधिकतासे है इसलिए इसे एक स्वतन्त्र उपनिवेश बनाकर पैसेवाले आदमियोंको लकड़ी नारियल आदिके कारखाने बनानेका ठेका दिया जा सकता है।

# अंडमन द्वीप समूह

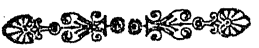

मैंने अपने पहले लेखमें वे दोष दिखाये हैं जिनके आधारपर मैंने इस परिणामपर पहुंचनेका यत्न किया है कि निर्वासितोंकी यह बस्ती न केवल गवर्नमेंट आफ़ इण्डियापर बड़ा बोझ ही है प्रत्युत बदनामीका बड़ा दाग़ है और न इससे न्यायका उद्देश्य ही पूरा हो सकता है। क्योंकि वहां कैदियोंके बदमाश हिस्सेका स्वतन्त्र रखना उनको बुराई फैलानेका अवसर देना है जिससे वह न केवल कैदियोंके उत्तम भागमें प्रत्युत वहांकी स्वतन्त्र आबादीके अन्दर पापों और दुराचारोंकी बीमारी फैला रहे हैं। वहां पर कैदी लोगोंकी सन्तानसे एक विशेष आबादी कई हजारकी स्वतन्त्र पैदा हो गई है। इनके बच्चोंके लिये एक अंग्रेजी मिडिल स्कूल है जिसमें पढ़े हुए कई नवयुवक सरकारी विभागोंमें क्लर्कोंका काम करते हैं। उन लोगोंका स्वदेश वही है। वे लोग हिन्दुस्तानमें आनेका कभी विचार ही नहीं करते। उन स्त्रियों और बच्चोंमें इन कैदियोंकी उपस्थिति अत्यन्त हानिकारक और भयङ्कर है। इसलिये इनके कुटुम्बियों ( क़बीलों )की ज़िन्दगी अत्यन्त दोषयुक्त है। ये परिणाम इस बदमाश हिस्सेकी थोड़ीसी मिली हुई स्वतन्त्रताका है जिसका वह इतना बुरा प्रयोग करता है।

दूसरा हिस्सा भले कैदियोंका है जो कि थोड़ा सा है। उनको वहांपर दूसरे बदमाशोंके साथ स्वतन्त्रताकी दशामें रखना उन्हें बिगाड़ना है। मतलब यह है कि निर्वासितोंका दण्ड दोनों प्रकारके कैदियोंके लिये न केवल लाभ रहित है प्रत्युत हानिकारक भी है। और इसका प्रभाव दूसरी स्वतन्त्र आबादीपर भी बुरा पड़ता है। यह देश निकालेका दण्ड किसी और सभ्य वा असभ्य देशमें नहीं पाया जाता क्योंकि आजकल जेलका सुधारक एक कमीशन बैठा है जिसका एक काम कालेपानीके विषयमें निर्णय करना है। एक बात जो हमें करनी चाहिये वह यह है कि गवर्नमेंटसे प्रार्थना करें कि कालेपानीको निर्वासितोंकी बस्ती न बनाया जाय। हिन्दुस्तानी कैदियोंका सुधार अपने अपने प्रान्तकी जेलोंमें ही रखनेसे हो सकता है अन्यथा जहां कहीं दूसरे स्थानपर ये जावेंगे अपनी बुराइयां दूसरोंतक पहुंचावेंगे।

एक और बात जो हमें करनी है वह उन कैदियोंकी ओर हमारा कर्त्तव्य है जिन्हें देशमें 'पोलिटिकल, कैदी समझा जाता है।

इसके होते हुए भी कि दूसरे साधारण कैदियोंमें विशेष भागको वहांपर गति करने और मिलने जुलनेकी स्वतन्त्रता प्राप्त है, इनमेंसे कई तो दूसरे कैदियोंपर इतना अधिकार रखते हैं जितना कि यहां जेलके दारोगेके हाथमें होता है। वहांपर कोई भी ऐसा कैदी नहीं जो निर्वासनको पसन्द करता हो। बड़े

बड़े बदमाश और चोर भी अपने स्वदेशकी यादमें यह केवल ख़्याल ही करके आंसू बहाने लग जाते हैं। हर साल कई घटनायें ऐसी होती हैं कि कैदी बाहरसे जंगलमें दूर देशतक भागकर निकल जाते हैं और वहां बांसके पेड़ काटकर बड़े २ बेड़े बनाते हैं। चोरी, डाका करके आटा और दूसरा सामान इकट्ठा करते रहते हैं। एक ओर उनको जंगलमें रहनेवाले जंगलियोंके तीरोंसे मरनेका डर होता है, दूसरी ओर सरकारी पुलिस खोज लगाती रहती है। इन सब संकटोंकी अवस्थामें समुद्र यात्राकी तय्यारी करते हुए आटापानी बेड़ेमें रखकर समुद्रोंमें बेड़ा डाल देते हैं। उनका छुटकारा होता है। कई मार्गमें डूबकर या भूखे प्यासे मर जाते हैं। इस साल हीमें जब कि मैं उधरसे आनेको था दो आदमी एक बेड़ेमें बम्बईके समीप दो महीने समुद्रमें यात्रा काटनेके बाद पकड़े गये। उनका बेड़ा लङ्काके नीचेसे होता हुआ उधर पहुंचा होगा। कलकत्तेसे अंडमान ४०० मीलके लगभग है।

ये लोग भारतके जेलखानोंको देशनिर्वासनकी अपेक्षा कई गुना उत्तम समझते हैं। देशकी जेलोंमें इन्हें अपना देश ही दिखाई देता है। पोलिटिकल कैदियोंकी दशा देखिये जोकि देश निर्वासित हैं और साथ ही सदाके लिए जेलमें बन्द हैं और जेलके अन्दर भी उनपर विशेष दृष्टि एवं निरीक्षण रखा जाता है। यद्यपि जेलकी सोसाइटी, जेलका भोजन, जेलका काम दूसरे कैदियोंको इतना प्रतिकूल कभी नहीं हो सकता जितना

कि पोलिटिकल कैदियोंके; क्योंकि यह प्रायः थोड़े बहुत शिक्षित होते हैं या दुनियांमें अच्छी स्थिति रखते हैं। इन लोगोंका ५ सालका कष्ट दूसरोंके १० सालके बराबर है। अंडमान-के जेलमें कोई ५० के लगभग ऐसे कैदी अभीतक विद्यमान हैं। इनमेंसे १० तो ऐसे पञ्जाबी हैं जिनका बर्मामें मुकद्दमा हुआ और वहांसे वे कालेपानी आये। बर्मा गवर्नमेंटने उनकी ओर कुछ ध्यान ही नहीं दिया और न कोई बर्मा गवर्नमेंटसे प्रार्थना करने वाला है। इनमेंसे कुछ तो आसाममें पकड़े गये। अगर यह मान लें कि इन्होंने वहां बैठे सरकारके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा तो भी वे न तो हिन्दमें आये और न उन्होंने कोई काम सरकारके विरुद्ध किया। वे विदेशमें थे। वहां उन्हें विशेष आज्ञासे पकड़ा गया। दो यू० पी० के मुसलमान हैं; एक चीनमें, दूसरा रंगूनमें पकड़ा गया। एक और यू० पी० के जिले झांसीका लाहौरके मुकद्दमेमें था। इन तीनोंके विषयमें यू० पी० गवर्नमेंटका और बर्माके मुकद्दमे वाले पञ्जाबियोंके लिये पञ्जाब गवर्नमेंटका ध्यान दिलाना आवश्यक है। दो मरहठा सिपाही और कुछ बङ्गाली नवयुवकोंको छोड़कर २० के लगभग शेष पञ्जाबी हैं जिनमेंसे ५ तो जहाजमें पकड़े गये और दो उतरनेके थोड़े दिन बाद। यद्यपि उन्होंने उस समयतक सरकारके विरुद्ध इस देशमें कुछ न किया था इनको और शेष दूसरोंको भी अपनी सफ़ाईका पूरा अवसर नहीं दिया गया और न उनके मुकद्दमेकी कानूनी अपील या मुकद्दमेकी कोई कार्यवाही की गई। इनका

दोष था या नहीं, या यदि था तो इसकी क्या हद थी—ईश्वर जानता है। हर अवस्थामें यह तो स्पष्ट है कि उन्होंने जो कुछ किया वह दूसरेके बहकानेसे और अपनी सम्मति और समझकी ग़लतीसे किया। वह सम्मति बदल चुकी है और भूल ठीक हो चुकी है।

# कालेपानीकी एक अन्दरूनी झलक

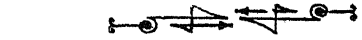

कालापानी और शेष संसारके मध्यमें पत्र-व्यवहार या आना जाना एक ही जहाज़के द्वारा होता है। इसका नाम 'महाराजा' है। १० दिसम्बर सन् १९१५ को 'महाराजा' आकर समुद्रमें खड़ा हो गया। कैदी लोग जहाज़के दूसरे निचले तहखानेमें यात्रा करते हैं। चार दिनके बाद हम भी जहाजके ऊपरके 'डेक' पर आये। पुलिसका भी सुदृढ़ पहरा हमारे चारों तरफ था। समुद्रके ठीक किनारेपर एक बड़ा शानदारसा महल नजर आया। दूरसे शाही किला मालूम देता था। पूछने पर मालूम हुआ कि वह तो जेलका मकान था जो हमारा भावी निवासस्थान बनना था। किश्तीमें उतारकर हम किनारे पर लाये गये। किनारेसे ऊंची घाटीपर चढ़कर उसी मकानके फाटकपर हम पहुंच गये और उसी एक मिनटमें मकानके अन्दर प्रविष्ट हो गये। मकानके मध्यमें एक चारमंजिला बुर्ज सा है। इसके चारों ओर सात फाटक हैं। प्रत्येक फाटकके अन्दर प्रविष्ट होनेपर आदमी जेलके भिन्न भिन्न घेरेमें प्रविष्ट होता है। हमें ३ नम्बरके हलेमें दाखिल किया गया। हर एक नम्बरमें अकेली कोठरियां तीनमंजिला बनी हुई हैं। फाटक-पर हमें जेलकी वर्दी पहना दी गई। अब हमारा जेलका जीवन

प्रारम्भ हो गया। पहले आठ नौ महीने मैंने लाहौर जेलमें गुजारे थे। इस अवसरमें पहले कुछ मास तो हम 'हवालाती' की तरह वहां रहे। यद्यपि दूसरे कैदी हमारे ऊपर शासन करते थे परन्तु हमें इनसे बातचीत करनेकी आज्ञा न थी। इसके बाद दो महीनेतक काल-कोठरीमें मृत्युकी प्रतीक्षा करते रहे तब भी कैदको जिन्दगीका कुछ हाल मालूम नहीं हुआ। प्राण-दण्डके देश निकालेमें बदल जानेके एक सप्ताह बाद कलकत्तेको रवाना कराये गये। वहांसे १० दिनके अन्दर अंडमनको। इसलिए हमारे कैदके जीवनका आरम्भ वहीं हुआ।

मैं जेलके जीवनकी सब घटनायें यहां लिखना नहीं चाहता केवल इतना लिख देना पर्याप्त है कि वहांका जेल इस पृथ्वी लोकपर एक 'नरक' है। जरा विचार कीजिये किन लोगोंके बीच हमें रहना पड़ा। दुनियांमें हमारा देश पतित समझा जाता है। भारतके जितने अपराधी और अपराध करनेवाले लोग हों वे देशके जेलोंमें जाते हैं जिनकी संख्या लाखों है। इन जेलोंसे चुने हुए बदमाश कैदी 'अंडमन' को जाते हैं जिनकी संख्या १०–१२ हजार है। इन लोगोंको वहांपर अपनेको सुधारनेका अवसर दिया जाता है। साल, छः महीनेके थोड़े समयके बाद उन्हें जेलके निरीक्षण तथा बन्धनसे बाहर निकाल-कर थोड़ी स्वतन्त्रतामें रखा जाता है। उनमेंसे जो फिर कोई अपराध या दोष करते हैं वे नियमपूर्वक मुकद्दमेके बाद फिर जेलमें आते हैं। हमें अपराधियोंके इस 'इतर' के मध्य रहना

पड़ता है। चोरोंके चोरों, ठगोंके ठगों, और बदमाशोंके बदमाशोंकी दुनियामें रहना मनुष्य जीवनका एक अद्भुत और नया परीक्षण है। मैं समझता हूं इसका आनन्द नरकके आनन्दसे कई गुना अधिक मनोरञ्जक है।

तीन नम्बरके हातेमें १५० कैदी होंगे जोकि प्रायः बाहरके दण्ड पाए हुये थे। कोठरियोंकी पंक्तिके सामने एक लम्बा बरामदा है जिसे 'लाइन' कहा जाता है। इस 'लाइन' में बैठकर काम किया जाता है। मैं बैठा हुआ दोनों हाथोंसे छिलकेकी रस्सी बना रहा था कि एक नवयुवकने मुझे कहा "आप कहांसे तशरीफ़ लाए हैं?" प्रश्न सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ और हंसी भी आयी। मैंने कहा कि "मैं तशरीफ आदि तो नहीं लाया, बंधा हुआ यहां आया हूं"। वह यू० पी० के प्रान्तका रहनेवाला था। चार साल कैद काट चुका था। बाहर गोरोंकी बारकमें मिस्त्रीका काम करता था। चोरीके अपराधमें उसे जेलका दंड दिया गया था। मैंने इससे हालात पता लगाये, उसने बतलाया जिस प्रकार बचपनमें उसे बुरी संगतिमें पड़कर शराब आदिका स्वभाव पड़ गया था। किसी वेश्याके सम्बन्धसे शत्रुता आरम्भ हुई जिसपर उसने अपने एक मित्रको तलवारसे कतल कर दिया और कालेपानीका दण्ड प्राप्त किया। मुझे कुछ समयतक बड़ी उत्सुकता रही कि इन लोगोंसे बातचीत करके इनकी बातोंका पता लगाऊं। इनमें चारों ओर ठगों और डाकुओंकी घटनाएं बहुत मनोरञ्जक हैं। इनकी कथायें तो

ऐसी हैं जैसी लोग उपन्यासोंमें पढ़ा करते हैं; कैसे इनमेंसे कई साधुओंका भेष बनाकर फिरते थे और स्त्रियोंको उनके आभूषणों सहित निकाल ले जाते थे, कैसे कई पुलिस अफसरोंकी वर्दियां पहने हुए और अपने साथ सिपाहियोंको लिये लोगोंको लूटनेके लिए जाया करते थे, कैसे इनमें कई जेंटिलमैन बने हुए फर्स्ट और सेकंडक्लासकी गाड़ियोंसे सन्दूक उड़ा ले जाते थे, कैसे इनमें कई गिरोह थे जोकि बड़े बड़े शहरोंमें व्यापारकी कोठियां बनाकर रहते थे और अपने साथियोंको ख़बर देकर दूसरे बड़े बड़े व्यापारियोंके मालको लुटवाया करते थे, कई अपनेको 'कीमियागर' बताकर लोगोंके आभूषण उड़ा ले जाते थे, कई बड़े नामी डाकू थे जिनके अधीन सैकड़ोंकी संख्यामें उनके शिष्य थे और भिन्न भिन्न स्थानोंपर उनके एजेण्ट थे जो उन्हें अमीरोंके मालका पता दिया करते थे, कितनोंका काम जौहरियोंका भेष बनाकर राजाओं और रईसोंको लूटना था, बहुतेरे डाकुओंके गिरोहमेंसे थे जो वर्षों तक गवर्नमेंटकी पुलिसका मुकाबिला करते रहे, कई ठगोंका काम अत्यन्त सुन्दर बिल्लौरी गोलियां या गेंद पास रखकर लड़कों और लड़कियोंको बहका ले जाना और उनके आभूषण उतार ले जाना था। अभिप्राय यह कि अंडमनके अन्दर माल और सम्पत्ति ठगने और चुराने वाले अपराधियोंकी संख्या बहुत ही अधिक है। 'सोशलिस्ट' लोग एक सिद्धान्त यह रखते हैं कि यदि जायदादमें मिलकियत ( Property ) उड़ा दी जावे तो

बहुतसे अपराध स्वयमेव दूर हो जावेंगे। इससे नीचेका एक सिद्धान्त मैंने भारतके लिए स्थिर किया है कि यदि किसी प्रकार-से स्त्री जातिके अन्दरसे आभूषणोंकी कामना दूर कर दी जाय और वही रुपया बैंकोंमें जमा करा दिया जाय तो इन सब अपराधोंमें आश्चर्यजनक न्यूनता हो जाय। आभूषण बनवाने और पहिननेकी रीति यूरोपके देशोंसे निराली भारतमें पायी जाती है। इसी कारणसे इन अपराधोंकी संख्या भी भारतमें निराले ढंगपर पायी जाती है। आभूषणोंको बन्द कर दो, चोरी चमारी, डाका स्वयमेव ही बन्द हो जावेगा।

इन अपराधोंकी तहमें जानेसे जितनी खोज की उतना ही अधिक निश्चय होता गया कि प्रथम तो चोरीका आरम्भ सर्राफ़ या सुनारकी सहायतासे होता है क्योंकि यही लोग चोरोंसे मिले होते हैं और इनको आभूषणों आदिके होनेकी सूचना रहती है। चोरीका परिणाम या पूरा होना तो अवश्य ही इनके साथ सम्बन्धित है क्योंकि केवल सुनार या शर्राफ़ ही हैं जोकि आभूषणोंको सस्ता ख़रीदकर गला लेते हैं। यदि ये लोग ऐसा करनेको तय्यार न हों तो चोरीके आभूषणोंका बेचनाही असम्भव हो जाता है। केवल ये दो श्रेणियां हैं जो अपने प्रेमियोंका ख़ून पीकर जीवित रहती हैं। अमीर लोग पहले सोना ख़रीद-कर और आभूषण बनवाकर उनकी पालना करते हैं फिर ये लोग वही आभूषण चोरी कराकर अपना धन इकट्ठा करते हैं। मेरा यह अभिप्राय नहीं कि सब शर्राफ़ और सुनार ऐसे ही होते हैं।

निस्सन्देह इनमें कई ईमानदार हैं। यही तो कारण है कि सबके आभूषण चोरी नहीं हो जाते। यदि स्त्रियोंमें आभूषणोंकी अभिलाषा न रहे तो उन लोगोंको भी प्रलोभन न रहे और अपराध भी न हों।

# अंडमनके राजनैतिक कैदी

लोग कहते हैं कि यह ख्याल साधारण है कि संसारके सब सभ्य देशोंमें पोलिटिकल कैदियोंके साथ विशेष प्रकारका व्यवहार किया जाता है। जिसके अर्थ यह समझे जाते हैं कि उनके लिये विशेष सुभीते रखे जाते हैं। हमारे जेलोंमें सरकारके विरुद्ध अपराध करनेवाले कैदियोंको 'पोलिटिकल कैदी' समझा जाता है। अंडमनका पिछला जेलर मिस्टर बारी विशेष विचारोंका व्यक्ति था। हममेंसे कोई आदमी यदि अपने को 'पोलिटिकल' कह दे तो वह जल जाता था इसी कारणसे कई पोलिटिकल कैदियोंसे गालीगलौज हुआ और उनको दण्ड भी मिले। वह कहा करता था कि तुम सब 'बाग़ी' हो। बाग़ी हो पोलिटिकल नहीं हो इन दोनोंमें क्या भेद है, समझमें नहीं आता। हमारे मुक़द्दमेके जिन व्यक्तियोंपर डाकेका दोष लगाया था उनको तो भारतसरकार भी दूसरे प्रकारका अपराध कह कर टाल देती है। मैं वैयक्तिक तौरपर यह विश्वास रखता हूं कि जिन लोगोंने गुप्त सभायें बनाकर रुपयेकी आवश्यकता पूरी करनेके लिये डाका मारनेकी शिक्षा दी है उन्होंने देशभक्तिके भावका अत्यन्त बुरा और अनुचित प्रयोग किया है और ऐसे लोग देशके नवयुवकोंका मार्ग भ्रष्ट करनेसे

घृणाके योग्य हैं। मैं समझता हूं कि बुद्धिमान शत्रु देशके लिए उतना भयंकर नहीं जितना कि मूर्ख मित्र। परन्तु फिर भी यह कोई नहीं कह सकता कि जिन नवयुवकोंपर डाकेका दोष लगाया गया है वे पोलिटिकल अपराधी नहीं क्योंकि उनका उद्देश्य रुपया प्राप्त करना न था और न वह रुपया उनके अधिकारमें रहा और वस्तुतः न गवर्नमेंट उनको डाकू समझती है क्योंकि यदि ऐसा होता तो 'रौलट कमीशन'की रिपोर्ट उनकी ही बातोंसे भरी हुई न होती। मैंने यह वर्णन केवल इसलिए किया है कि यदि पोलिटिकल कैदियोंके साथ दया और कृपाका व्यवहार किया जाय तो ऐसे लोगोंको पोलिटिकल कैदियोंकी सूचीसे पृथक् करना उचित न होगा। यह केवल दैवसंयोग है कि उनका सम्बन्ध किसी डाकेसे हो गया अन्यथा डाकुओंकी तरह डाका मारना उनके विचारसे कोसों दूर था। मैं नहीं कह सकता कि यहांपर जिन लोगोंको सरकारके विरुद्ध अपराधों—यथा १२१ से १२४ तक धाराका दण्ड दिया गया है वे पोलिटिकल कैदीकी स्थिति रखते हैं या नहीं? मैं केवल दूसरे कैदियोंसे इनमें अन्तर करनेके लिये पोलिटिकल कैदी शब्दका प्रयोग करता हूं। अंडमनमें उनकी सबसे बड़ी शिकायत यह है कि यद्यपि दूसरे कैदियोंको देशनिर्वासनका दण्ड दिया गया परन्तु उन्हें देश निर्वासन और जेल दो दण्ड दिये जाते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि दूसरे कैदी वहां जानेपर थोड़ा समय-६ मास या वर्ष भर-जेलमें रखे जाकर जेलसे बाहर निकाल दिये जाते

हैं। कई पढ़े लिखे कैदियोंको विशेषतः आराम रहता है और कई बातोंमें यहांकी अपेक्षा अधिक स्वतन्त्रता रहती है। स्वतन्त्रताको छीनना ही जेलकी कैदका वास्तविक उद्देश्य है। चेष्टायें और स्वतन्त्रता जेलकी चारदीवारीके अन्दर बन्द हो जाती हैं। कोठरी बन्द कर देनेसे चेष्टा केवल कोठरीकी दीवारों तक बद्ध हो जाती है। बेड़ियां या हथकड़ियां लगा देनेसे टांगों और हाथोंकी स्वतंत्रताको शरीरके साथ ही बन्द किया जाता है। दूसरे निवासित कैदियोंसे यह स्वतंत्रता छीनी नहीं जाती। वे बाहर रहते हैं सरकारी काम करते हैं। वहाँपर दंगा, चोरी, जुआ-बाजी आदि अपराध करते हैं तो नियमपूर्वक अदालतके सामने उपस्थित करके फिर इन्हें कानूनके अनुसार जेलका दण्ड दिया जाता है। इसके होते हुए भी देश निकालेका इतना दुःख है कि वे लोग पुकार पुकार कर कहते हैं कि उन्हें स्वदेशकी जेलकी कैद इससे कई गुना अच्छी है।

वहांकी गवर्नमेंटके लिये भी एक रहस्य है कि वह उन पोलिटिकल कैदियोंको जिन्हें गवर्नमेंट इतना भयानक समझती है-क्योंकर बाहर रहने दे और चेष्टा और बातचीतकी थोड़ी बहुत स्वतंत्रता देकर अपने लिए तकलीफ पैदा कर ले। यद्यपि मैं नहीं मान सकता कि हमारे आदमियोंमें कोई ऐसा मूर्ख होगा जो देश निर्वासनमें कोई अनुचित चेष्टा करे परन्तु स्थानीय गवर्नमेंट और विशेषतः जिसका सरबन्ध ही कैदियोंके साथ है उसको कभी विश्वास नहीं आ सकता। मेरे जानेसे पहिले एक अवसर-

पर सिवाय सावरकर भाइयोंके बाकी सबको जेलसे बाहर किया गया। इन दिनोंमें कुछ लेख कलकत्तेके समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हुए थे जिनसे लोकल गवर्नमेंट चिन्तित हो गई। एक साधारण बङ्गाली कैदीने कुछ ऐसा कह दिया कि पोलिटिकल कैदी सरकारके विरुद्ध षड्यंत्र करते थे। इसका बहाना बनाकर फिर सबको जेलमें बन्द कर दिया गया। वहांकी गवर्नमेंट पोलिटिकल कैदियोंके विषयमें सावधानीकी पालिसी बरतती है अपराध आदिका विचार नहीं रखा जाता।

दूसरे, पोलिटिकल कैदियोंको जेलके अन्दर रखकर भी उनपर विश्वास नहीं किया जा सकता। जेलमें जितना आरामका काम समझा जाता है वह सब दूसरोंपर निरीक्षण और प्रबन्धका है। इसके लिए पहले विश्वासका होना आवश्यक है। ऐसा काम सब दूसरे कैदियोंके सुपुर्द होता है यद्यपि उनमेंसे बहुतसे बुरे होनेके कारण इनका व्यर्थ प्रयोग करते हैं। जेलके अन्दर काम करनेवाले कैदीकी स्थितिमें रहनाही प्रतिदिनके तिरस्कारका मुंह देखना है। प्रतिदिन प्रातः दूसरे निरीक्षक कैदी जो कि छोटे जेलके अफ़सरका काम करते हैं ( उन्हें "पेटी अफसर" और 'टिण्डल' कहते हैं ) ताला खोलकर लाइनमें बिठाकर गिनती करते हैं और शामके समय कोठरीमें बन्द करनेसे पहले कुरता आदि उतरवाकर तलाशी लेते हैं।

इसके सिवाय पोलिटिकल कैदी अपनी सोसाइटीमें अच्छी स्थितिके आदमी होते हैं। उनकी सोसाइटी भले आदमियोंके

साथकी ही होती है और भोजन वस्त्र उत्तम प्रकारका होता है। इनके लिए जेलके दूसरे कैदियोंकी संगति ही पर्याप्त दण्ड है। ये लोग अपनी स्वतंत्रतामें भी ऐसे बदमाशों और चोरोंकी संगतिमें रहते हैं और वैसे ही बातचीत करते हैं। पोलिटिकल कैदियोंको न केवल उनके मध्यमें प्रत्युत कुछके अधीन रखना अत्यन्त अयोग्य बात है। दूसरे कैदियोंको स्वतन्त्रताकी दशामें लगभग इसी प्रकारका काम करना पड़ता है जैसा कि कैदीकी अवस्थामें। दूसरे कैदियोंका घरोंका भोजन मात्रामें चाहे अधिक हो परन्तु गुणोंमें लगभग ऐसा ही होता है जैसा कि जेलमें उनको मिल जाता है। उनके लिए वह भोजन खाना साधारण बात है जिसका खाना भले दरज़ेके लोगोंके लिए विपत्ति है। इन सब अवस्थाओंके अन्दर रहकर मैंने निश्चय किया था कि अंडमनके जीवनसे मृत्यु अधिक अच्छी है। मुझे इस बातका पूरा अनुभव है कि जो आदमी पांच सालतक ऐसी अवस्थामें रह चुका है उनको अपनी बेसमझीका दण्ड पर्याप्त मिल गया है। अब क्योंकि वे अपनी सम्मतियोंको वर्तमान अवस्थाके अन्दर बदल चुके हैं, इन सबको सम्राटकी घोषणाके अनुसार छोड़ दिया जाय।

## इंडियन नैशनल कांग्रेसके विषयमें कुछ विचार

कांग्रेस एक प्रबल जातीय संस्था बन गई है। महात्मा गांधी इस समय अपनी शक्तिकी अन्तिम सीमापर हैं। कांग्रेसमें शीघ्र या थोड़ी देरमें और प्रबल परिवर्तन होने वाला है।

जब हम लाहौरसे चले तो यह ध्यान न होता था कि कांग्रेसकी शक्ति कहांतक देशमें बढ़ चुकी है। मार्गमें चलते चलते मालूम होता था कि सचमुच कांग्रेसके प्रभावसे देशके सब आदमियोंमें राजनैतिक भाव पर्याप्त दर्जेतक उन्नति कर चुका है। जिन लोगोंने देशके नामपर कष्ट सहन किये हैं वैसे ही उनके नामकी पूछताछ होती थी और व्यक्तियोंके नामकी जय जयके साथ कई और व्यक्तियोंके नामपर जय २ समुदायके मुंहसे स्वयं निकलती थी और लोग सबको देखनेकी बड़े ज़ोरसे अभिलाषा करते थे और सर्वत्र यह चाहते थे कि वापसीपर इनके स्थानपर ठहरें और लोगोंकी तृष्णा बुझावें। विशेष कलकत्तेमें मोटरोंपर, गाड़ियोंमें और ट्राम गाड़ियोंपर पञ्जाब, बम्बई और मद्रासके चेहरे दिखाई देते थे। आप चकित होंगे कि केवल पञ्जाबके प्रतिनिधि कांग्रेसमें हज़ारसे अधिक थे जिनमेंसे आधे प्रतिनिधि बङ्गालमें निवास करनेवाले थे किन्तु फिर भी चार पांच सौ लोगोंका इतनी दूरसे इस खराब ऋतुमें यात्रा करना कुछ अर्थ रखता है। इनमेंसे पर्याप्त संख्या मुसलमानोंकी थी परन्तु कभी २ लाहौरमें ही मुसलमानोंको कांग्रेसमें सम्मिलित होनेके लिए विविध प्रकारके प्रलोभन देने पड़ते थे। कांग्रेसके पण्डालमें एक तिलभर जगह दिखाई न पड़ती थी। प्रतिनिधियोंकी संख्या इतनी बढ़ गई कि पहले ही दिन अधिक टिकट जारी करना बन्द कर दिया गया; दूसरे देखने वालोंके टिकट का दाम पांचसे २०) रुपये कर दिया गया।

कितना अन्तर था! इसपर भी टिकट देना स्थानके न होनेसे बन्द करना पड़ा। इन बातोंको छोड़कर जो बात कांग्रेसको वास्तवमें जातीय संस्था बनाती है वह कांग्रेसकी भाषा है। निस्सन्देह अमृतसर कांग्रेसमें बहुतसी वक्तृतायें हिन्दी भाषामें हुईं किन्तु कलकत्ता कांग्रेसमें बहुसंख्यक भाषणोंका हिन्दीमें होना विशेषता रखता है। जब कोई हिन्दी जानने वाला बक्ता उठता था तो चारों ओरसे 'हिन्दी हिन्दी' का शोर मच जाता था। हकीम अजमल खांको तो हिन्दी बोलना ही था परन्तु लोगोंने पंडित मोतीलाल नेहरू जैसे व्यक्तिको बाधित किया कि वह हिन्दीमें भाषण करें। श्रीमती मंगला देवीकी वक्तृता अत्यन्त प्रभावोत्पादक और उचित थी जिसमें श्रीमती-जीने अपनी बहिनोंसे कहा कि जैसे युद्धके समयपर जब इङ्गलैण्डके पुरुष रणभूमिमें गये थे और स्त्रियोंने सब काम अपने ऊपर ले लिये थे वैसे ही उनका इस परीक्षाके अवसरपर कर्तव्य है कि अपने बच्चोंऔर पतियोंको देशके लिये बलिदान होने दें और स्वयं सब कार्य भार अपने ऊपर लें। प्रोफेसर राममूर्त्तिने भी हिन्दी भाषामें प्रभावशाली बक्तृता दी और इससे देशकी भावी भाषा-का निर्णय होता दिखाई पड़ता है।

तिलक महाराजका नाम आनेपर लोग खड़े हो जाते थे और मौनसे झुक जाते थे। बाबू व्योमकेश चक्रवर्ती प्रधान स्वागत कारिणी कमेटीने बड़े हृदय-विदारक शब्दोंमें तिलक महाराजका वर्णन किया। लाला लाजपतरायने सबसे पहले इनकी मृत्यु

और सारे देशके सम्मिलित शोकको वर्णन करके कहा कि "इस समय सारा देश उनके वियोगके दुःखमें डूबा हुआ है परन्तु जितनी सहायताके लिये हम इनके वियोगको यहां अनुभव करते हैं, शब्दोंमें बताया नहीं जा सकता। दुनियांमें इतना शोक किसी व्यक्तिके लिये भी नहीं किया गया। यह प्रकट करता है कि देश किसके साथ है"। आजकल देशके सम्मुख केवल एक ही व्यक्ति दिखाई पड़ता है वे 'महात्मा गांधी' हैं। कांग्रेसकी सब्जेक्ट कमेटीमें जो व्यक्ति महात्मा गांधीसे विरूद्ध सम्मति प्रकट करते हैं उनकी बात कोई सुनना नहीं चाहता। जब महात्म गांधी या असहयोगका वर्णन आता है सारा पण्डाल तालियोंसे गूँज उठता है। ऐसा दिखाई देता है कि महात्माकी आत्मिकशक्तिने विजय प्राप्त करली है। यदि वह सर माइकेल ओडवायर जो इस आत्मिकशक्तिसे अपने बलको प्रबल दिखाना चाहता था, आज आकर देखता और शर्म शर्म और दूसरे शब्द अपने कानोंसे सुनता तो उसे मालूम होता कि संसारमें कौनसी शक्ति प्रबल है, तलवारकी या आत्मिक बलकी।

जितनी वक्तृतायें कांग्रेस पण्डालमें हुई हैं उन सबका आधार इस सिद्धान्तपर था कि न तो ब्रिटिश पार्लियामेंट और न ब्रिटिश जनता हमारे साथ न्याय करनेको तैयार है। वह सदा अपने ही आदमियोंकी सहायता करेंगे। उनसे न्याय मांगना और उनपर भरोसा रखना व्यर्थ है। यहांतक तो सब वकील और दूसरे नेता सहमत थे। अब म० गांधी इसके लिये

लोगोंसे क्रियात्मक प्रमाण मांगते हैं। वह यह कि भारत सरकारके साथ मिलकर काम करना छोड़ दिया जाय। यह वह प्राप्तव्य मार्ग है जो कि मिस्र और आयर्लैण्डमें स्वीकार किया गया है। इस असहयोगपर कांग्रेसके वकील लीडर अभी तैयार नहीं मालूम होते। वे चाहते हैं कि एक और अवसर गवर्नमेंटको देना चाहिये। साथ ही वे यह भी कहते हैं कि इनकी श्रेणीपर ही क्यों अनुचित कठोरता की जाती है। रुपया और नोट प्रयुक्त करना भी सहयोग है क्या सर्वसाधारण उसे त्याग देनेको उद्यत है? क्या साधारण जनता भूमिकर नहीं देगी? वह अभी देशके भावोंको और देखना चाहते हैं। महात्मा गांधी आग्रह करते हैं कि हमारे पास अपनी अप्रसन्नताके प्रकाशका सिवाय असहयोगके और कोई साधन नहीं। किन्तु महात्माजीकी त्रुटि केवल इतनी है कि वह कहते हैं कि यदि कांग्रेस यह प्रस्ताव पास न करेगी तो वह कांग्रेससे पृथक् अपना काम करते जायंगे। इसमें दूसरी पार्टीको यह कहनेका अवसर मिलता है कि यदि वह कांग्रेसका साथ छोड़नेपर तैयार है तो उनका प्रस्ताव पास हो जाय पर हम कांग्रेससे पृथक् हो जायँगे। यह डरही यह बड़ा भारी खतरा है जो कि कांग्रेसके सामने है। इसलिये कांग्रेसके हितचिन्तक यह प्रयत्न कर रहे हैं कि कांग्रेसमें यह विभाग न हो नहीं तो देश एक भंवरमें पड़ जायगा। म० गांधीको आरम्भसे यह प्रस्ताव कांग्रेसमें लानाही न था अब उन्हें कांग्रेसके निर्णयके अनुसार चलना उचित है। आशा है कि इस

समय यह प्रश्न शान्तिके साथ हल हो जायगा किन्तु यदि आज नहीं तो थोड़ी देरमें कांग्रेसको एक क्रियात्मक प्रोग्राम इन्हीं साइन्सपर स्वीकार करना होगा और कांग्रेसमें वकील लोगोंकी क्या स्थिति होगी अब कहा नहीं जा सकता। इस कांग्रेसमें इस समय बारह सौके लगभग स्वयंसेवक काम करते हैं। सारा प्रबन्ध बिना पुलिसकी सहायताके किया जा रहा है जो बहुत अच्छा और सन्तोषजनक है। कल जरा सा झगडा पण्डाल-के बाहर स्वयंसेवकोंके बीच हो गया जिसमें एक दो स्वयंसेवक को चोट आई। अधिक संख्यामें स्वयंसेवक बङ्गाली हैं। इनके अतिरिक्त सौके लगभग भावड़ा, पञ्जाबी और मुसलमान वालंटियर भी हैं। उनकी शिकायत यह थी कि उनके साथ कोई अच्छा व्यवहार नहीं किया जाता दिलोंमें ईर्षा बढ़ती गई और पानी पिलानेके प्रश्नपर बोलचाल हो गई जिससे झगड़ासा हो गया हो। इस समय कांग्रसकी कार्यवाही समाप्त हो चुकी थी।

## "महात्मा गांधी"

मि० सी० आर० दास बंगालके प्रसिद्ध नेता थे जिनकी वक्तृतामें गांधी नामके पहिले "मिस्टर" का शब्द सहज स्वभावसे निकल गया। मुंहसे निकलते ही सुननेवालोंमेंसे एक ऐसी आवाज़ सी पैदा हुई कि मि० सी० आर० दासने तत्काल अपने आपको ठीक किया। एक पोलिटिकल उत्सवके अन्दर प्रतिष्ठा-की इतनी अन्तिम सीमा है कि एक सबसे योग्य हिन्दुस्तानीकी

थोड़ी सी भूल भी क्षमा न की जा सके। कांग्रेसके पंडालके अन्दर और बाहर जहां हज़ारों आदमी इकट्ठे थे महात्मा गांधीका नाम जादूका असर रखता था। यह जादूकी शक्ति और इतना महान् प्रभाव इस नाममें कहांसे आया? मैं एक विचारशील पञ्जाबीसे बात कर रहा था कि महात्मा गांधीके प्रोग्रामपर कार्य होना लगभग असम्भवसा है। साधारण लोग तो शायद ही ऐसा करेंगे कि अपने लड़के सरकारी स्कूलोंसे उठा लें। उन्होंने उत्तर दिया कि यद्यपि यह सब कुछ असम्भव दिखाई देता है परन्तु ६ अप्रैलकी राततक हमें सर्वव्यापी हड़तालका होना भी ऐसा ही दृष्टिगोचर होता था। उन्होंने कहा जब मैं सोया मुझे स्वप्नमें भी यह विचार न था कि कोई दूकान बन्द करेगा लेकिन आंख खुली तो दुनियांका रंग ही बदला हुआ था। इसके नाममें ही कोई जादू मालूम होता है इतना प्रभाव शायद ही किसी मनुष्यका जनतापर हो!

मेरे कलकत्ते जानेका एक बड़ा भारी प्रयोजन यही था कि महात्मा गांधी और श्रीमान् ऐंडरूज़ आदि महापुरुषोंके दर्शन कर सकूंगा। पूरे १५ साल व्यतीत हुए हैं। सन् १९०५ में मैंने गांधीजीके दर्शन जौंसबर्ग ट्रांसवालके अन्दर किये। पूरा एक महीना मैं इनके मकानपर इनके बाल बच्चोंके अन्दर रहा। मेरे लिये व्याख्यानोंका प्रबन्ध इनकी कृपासे हुआ। एक व्याख्यानमें वे सभापति भी बने।

उनके जीवनमें सादगी और नियम जो मैंने उस समय देखे

अभी तक वैसे ही चले आते हैं। इनमें स्वाभाविक प्रकारसे उन्नति होती रही है। उस समय वे बैरिस्टरी किया करते थे। तथापि उनका समय और रुपया सार्वजनिक कामोंमें ही व्यय होता था। इनके मकानपर कोई नौकर न था उनकी धर्मपत्नी ही बंगलेका सब प्रबन्ध रखती थीं। इनकी सादगीकी यह हद थी कि इन्होंने अपने और बच्चोंके जूतोंकी मरम्मतके लिए बूट सीनेका सब सामान रखा था और मरम्मत अपने हाथसे कर लिया करते थे।

भोजनके विषयमें इनके चित्तकी विचित्र रुचि थी। दिनभर केवल फलोंपर रहा करते थे इनके दफ्तरमें फलोंकी, जिनमें नट्श (मेवे) अधिक होते थे विशेष संख्या पड़ी रहती थी। केवल शामके समय पका हुआ भोजन खाते थे और जब मेज़के चारों ओर, सब कुटुम्ब बच्चों समेत बैठ जाते थे, भोजनकी सब सामग्री मेज़पर पड़ी होती थी तो वे स्वयं गीताका थोड़ा पाठ करते थे और फिर खाना बांटा जाता था। कौंट टाल्स्टायकी पुस्तकोंका इन्हें बड़ा शौक था और मुझे भी इनके स्वाध्यायकी उन्होंने सम्मिति दी। उनका फलाहारी सोसाइटी ( Vegitarian society )में विशेष अनुराग था। अगले वर्ष वह लण्डनमें रहे वहां एक डाक्टरने लण्डनके बाहरकी ओर एक हस्पताल खोला था जहां वह केवल फलोंका भोजन देकर रोगियोंकी चिकित्सा करता था। डाक्टरसे उनका विशेष प्रेम था। मैं इनके साथ था जब वह डाक्टरसे मिले और बादमें हस्पताल देखने गये। आज

इतने लम्बे समयके व्यतीत हो जानेके बाद मैं चकित हुआ कि वह अपने इस नियमपर ऐसी ही दृढ़तासे चले आते हैं प्रत्युत अब तो एक प्रकारसे दूधका भी त्याग कर रखा है। दूसरोंके बल देनेपर वा अधिक कहनेपर थोड़ासा बकरीका दूध पीते हैं और बाकी केवल फल। इनके धार्मिक विचारोंका केन्द्रित नियम एक है जिसे गौतम बुद्धने प्रचार किया और जिसपर मसीहने विशेष बल दिया। बुद्धने कहा था कि घृणा प्रेम करनेसे दूर होती है न कि घृणा करनेसे। जिसके लिए मसीहने कहा "मैं तुम्हें बताता हूं कि अपने शत्रुसे प्रेम करो" दक्षिणी अफ्रीकाकी गोरा आबादीके मुकाबलेके समय वह इस नियमको सामने रख कर आन्दोलन करते रहे। इस नियमपर आचरण करनेवाले मनुष्य बिरले ही हुआ करते हैं परन्तु इतना मैंने देखा कि अफ्रीका के हिन्दुओंके विरुद्ध द्वेषाग्निसे भरी हुई सफेद आबादीमेंसे भी कुछ व्यक्ति महात्मा गांधीके साथ अपनी जान और माल अर्पण किए हुये उपस्थित थे। वे वे ही मनुष्य थे जिनकी प्रकृति प्रेमसे बनी हुई थी। श्रीयुत ऐंड्रूजने मुझे बताया कि उनका प्रेम महात्मा गांधीसे किस प्रकार हुआ। वह दक्षिणी अफ्रीकामें गये। डर्बनके चर्चमें उनका व्याख्यान था। महात्मा गांधी कुछ साथियोंके साथ वहां आये उनको काला होनेके कारणसे निकाल दिया गया। उस समयसे वहांकी गोरा आबादीको गिरा हुआ और गांधीको ऊंचा समझकर मैं प्रेम करने लगा। इस नियमके आधारपर महात्मा गांधी दक्षिणी अफ्रीकाके मुसलमान भाइयोंसे

विशेष प्रेम रखते थे और उनकी सहायता हर प्रकारसे करते थे और वे मुसलमान लोग भी इनपर न्योछावर थे। हिन्दुओंके अन्दर यह शिकायत पायी जाती थी कि महात्मा गांधी उनके लाभोंकी बहुत ही कम परवाह करते हैं जिसका कारण यह था कि वह उनको इतना अपना समझते थे कि इनकी छोटी बातोंका इन्हें ध्यान न रहता था। इस कांग्रेसके जलसेमें भी एक श्रेणी थी जो यह कहती थी कि महात्मा गांधीने ख़िलाफ़त कमेटीको प्रसन्न रखनेके लिए पुरानी कांग्रेसकी पार्टीके साथ सहयोग ( Compromise ) नहीं किया। कुछ ही हो, इसमें कोई सन्देह नहीं कि महात्मा गांधी हिन्दू मुस्लिम एक्यताके स्तम्भ हैं। पोलिटिकल लाइनमें महात्मा गांधीका एक सिद्धान्त 'ब्रिटिश जातिपर पूर्ण विश्वास' था। गवर्नमेंटसे उनकी सहमति हो या न हो वह गवर्नमेंटके अन्दरसे पाप या स्वार्थपरता दूर करनेके लिये जिसे वह विशेष मनुष्योंकी चित्तवृत्तिका परिणाम समझते थे प्रयत्न करें, इसके लिए कष्ट उठायें परन्तु अंग्रेज जातिके लिये उनके दिलमें गहरी प्रतिष्ठा और प्रेम था। जब वह लंदनमें आये तो पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्माके यहां ठहरे। श्यामजी तो ठीक इसके विपरीत सिद्धान्तोंको मानते और प्रचार करते थे। वह कहते थे कि अंग्रेज़ जातिमें कई पवित्र और निस्स्वार्थ व्यक्ति हैं परन्तु जाति समष्टि रूपसे स्वार्थी और हमारे ऊपर शासक होनेके कारणसे हमारे नैसर्गिक शत्रु थे। महात्मा गांधीकी इनके साथ एक दो बार इस विषयपर बातचीत हुई। दोनों

दो भिन्न पक्षोंपर थे। फिर सम्बन्ध बिलकुल बन्द हो गया और यद्यपि पुराने मित्र थे, कभी मेल न हुआ। महात्मा गांधी ब्रिटिश जातिके विरुद्ध एक शब्द भी सहन न कर सकते थे। इनका विश्वास चट्टानकी तरह दृढ़ था। पन्द्रह सालतक तो इसमें कोई परिवर्तन पैदा न हुआ और अमृतसर कांग्रेसके समयतक तो वे लोकमान्य तिलककी प्रतिद्वन्द्वितामें इस चट्टानपर खड़े थे। बादके थोड़े समयमें वह विश्वास हिल गया। इस विश्वासका हिलना मेरी दृष्टिमें एक महान् विप्लवकी स्थिति रखता है। खिलाफत और पञ्जाबके अत्याचारोंके विषयमें ब्रिटिश जनताके व्यवहारने महात्मा गांधीकी समुद्रके समान अचल आत्मामें यह परिवर्तन पैदा किया। सब लोग इनपर यह आक्षेप करते थे कि अभी कल तो वे सहयोगके इतने पक्षपाती थे कि यदि अमृतसरमें इनका प्रस्ताव पास न होता तो वे अमृतसरसे दो बजेकी गाड़ीका टिकट लेनेपर तय्यार थे आज वह स्वयं सबकी सम्मतिकी प्रतिद्वन्द्वितामें कांग्रेस और देशको ठीक उसके विरुद्ध ले जाना चाहते हैं। यह क्यों? महात्मा गांधीका उत्तर स्पष्ट है। जिन घटनाओंने मेरा विश्वास उड़ा दिया है वे इतनी बलवान हैं कि उनके सामने थोड़ा बहुत तो कुछ स्थिति ही नहीं रखता। मुसलमान हिन्दुओंकी प्रतिष्ठाका प्रश्न है और प्रतिष्ठा जानसे बढ़कर प्यारी होनी चाहिए। यदि एक जाति अपमान जारी रखती है तो इसके साथ सहयोग करना धर्म विरुद्ध है।

# श्रीमान् ऐराड्रूज़ ।

जिस समय मैं दयानन्द कालेजमें काम करता था, देहली मिशन कालेजके प्रोफेसर ऐण्ड्रूज़के नामसे अच्छी तरह परिचित थे। मुझे अंडमन द्वीपके जेलके अन्दरही इतना पता लगा था कि ऐन्ड्रूज़जीने इस अन्यायको अनुभव करके जो कि मेरे साथ किया गया था, मेरेपर दुबारा विचार करनेका आन्दोलन किया था। कलकत्ता कांग्रेसको जाते हुए मेरा विचार था कि मैं इनके दर्शन ज़रूर करूंगा। कलकत्तेसे लौटते हुए मैं शान्ति निकेतन होकर गया। श्रीमान् ऐण्ड्रूज़ मुझे देखते ही खड़े हो गये और मुझे छातीसे लगा लिया। मेरे इस नये जीवनमें यह एक घटना थी कि मैं जीते जी इसे कभी नहीं भूलूंगा। नंगे पांव धोती और कमीज़ पहिने हुए मेरे सामने एक प्रेमकी मूर्तिकी तरह वह खड़े थे। जो भाव उस समय मेरे दिलमें पैदा हुये उनको मैं लेखमें वर्णन नहीं कर सकता और न उनके पास जतानेका प्रयत्न किया। मैं चुपके खड़ा रहा परन्तु मेरे दिलमें एक विचित्रसा उद्वेग था। श्रीमान् ऐण्ड्रूज़ अङ्गरेज़ हैं। उनके दिलमें अपनी जाति और देशके लिये ऐसाही प्यार है जो किसी अङ्गरेज़ बच्चेके दिलमें हो सकता है। कोई त्याग नहीं जो वे अपनी जाति और देशके लिये करनेको तय्यार न हों, जो कोई और अङ्गरेज़ कर सकता है उनमें केवल एक अधिक बात है। उनमें मनुष्यमात्रके लिये न्याय

और सत्यके लिये प्रेमका भाव है और भी बहुत अङ्गरेज़ महाशय हैं जो अपना अधिकार समझते हैं और चाहते हैं कि कोई भारतीय उनके सामने आता हुआ उनको सलाम करे। उनको सलाम मिलते हैं किन्तु डरके कारणसे । डर सच्चा हो या झूठा हो उपस्थित अवश्य होता है । इस सलामका क्या मूल्य ? जिस समय उस आदमीका डर उतर जाता है वह अपने कियेपर पश्चात्ताप करता हैं और भविष्यत्में आंखें ऊंची करके निकल जाता है और सलामके लिए सिर नहीं झुकाता बहुतेरे हिन्दुस्तानी हैं जो अपना काम निकालना चाहते हैं और न केवल झुक झुक कर सलाम करते हैं प्रत्युत प्रसन्नता। प्राप्त करनेके लिये झूठी सच्ची ख़बरें दूसरोंके विरुद्ध पहुंचाते हैं। क्या इनकी खुशामद और सलामोंका कुछ मूल्य है? जब उपाधियोंका मान न रहेगा या जब उनको भूमि प्राप्त करने या किसी सम्बन्धीको पद दिलानेकी आशा समाप्त हो जायगी, उनका सलाम समाप्त हो जायगा और वे स्वार्थपरायण 'तोता चश्म' हो जावेंगे। सच्चा सलाम और मान केवल प्रेमसे पैदा होता है और स्वार्थ बदल जाता है। प्रेम कभी बदलता नहीं। हिन्दुस्तानी अङ्गरेजोंको प्रेम कर सकते हैं यदि इनके दिलोंमें प्रेमका कोई स्थान हो। यदि दिल दूसरे भावोंसे भरा हो तो वहां प्रेमका स्थान कहां ? जितने वैयक्तिक शासन होते हैं उनके लिए व्यक्तिका चुनाव सबसे अनिवार्य और आवश्यक शर्त है। उनकी गवर्नमेंटका अच्छा या बुरा होना आदमीके

अच्छे या बुरे होनेपर निर्भर होता है। पञ्जाबमें जितना अन्याय हुआ उसके लिए केवल एकही पुरुष सर माइकेल ओडायर उत्तरदाता है। यदि उच्च दृष्टिसे देखा जाये तो इसका भी कोई अपराध नहीं। इसकी प्रकृतिही ऐसी थी। उसमें क्रोध और द्वेषका भावही भरा था। वह क्रोधको वीरता समझता था और दमनको साम्राज्यकी रक्षाकी नीति। उसके इस विशाल दृश्यका मुझे वैयक्तिक अनुभव है। मैं उसके निजी अत्याचारका शिकार था। यद्यपि वह मुझे फांसी देनेपर तुला हुआ था परन्तु लार्ड हार्डिङ्गके दिलकी कोमलतासे जान बचा दी गई। मैं चार सालसे अधिक जेलमें पड़ा सड़ रहा था कि अन्डमनके बड़े अफ़सर चीफ़ कमिश्नर विलायत गये। वहां उन्हें सर माइकेलसे मिलनेका संयोग हुआ युद्ध समाप्त हो चुका था। परन्तु सर माइकेल यह सहन नहीं कर सकता था कि कोई आदमी जिसे वह पसन्द न करता था, जीवित रहे। इसने मेरे विषयमें चीफ़ कमिश्नरसे यही प्रश्न किया "क्या वह अभीतक जीवित है?" साधारण अङ्गरेज यह समझते हैं कि जो कुछ गवर्नमेंट करे वह ठीक है। प्रश्न यह है कि गवर्नमेंट दोनों अवस्थाओंमें विरुद्ध हो जाती है यदि सर माइकेल या श्रीमान एण्ड्रूज़ गवर्नमेंट के अधिकारी हों।

उनके माता पिताका प्रभाव है कि ऐण्ड्रूज़ ऐसे पवित्र आत्मा हैं। एक विशेष घटना जिसने उनके जीवनपर स्थिर प्रभाव किया यह है:—वह छोटे थे कि उनके पिता सब रुपया और

माल अपने एक मित्रके नाम बैंकमें छोड़ गये। वह पुरुष इनके पिताका बहुतही प्यारा मित्र था। वापिस आनेपर उसे मालूम हुआ कि वह पुरुष सब माल स्वयं हड़प कर गया। इनके पिताको दुःख हुआ होगा किन्तु क्रोध नहीं आया और वह घुटनोंके बल बैठ गया और मित्रके लिये प्रार्थना की कि "हे परमात्मा! इसे क्षमाकर और सीधा मार्ग दिखा; जिससे कि इसकी आत्मा शुद्ध हो" इस पितासे ऐण्डरूज़ने मसीहकी वह शिक्षा सीखी जो कि जीवनका केन्द्र बन रही है। जब श्रीमान् ऐण्ड्रूज़ दक्षिणी अफ्रीका गये तो एक गिरजाघरमें उनका व्याख्यान था। महात्मा गांधी और उनके कुछ साथी चर्चमें व्याख्यान सुननेको आये। वहांके गोरे लोगोंने उनको चर्चसे बाहर निकाल दिया। उस समयसे उनमें महात्मा गांधीके लिये विशेष मान और प्रेम प्रारम्भ हुआ जिसकी इस समय कोई सीमा नहीं है।

मानुषीय प्रेमका भाव इनमें अब इतना बढ़ गया है कि वे इन अंग्रेजोंके भारतके साथ व्यवहारको अक्षन्तव्य समझने लग गये हैं और अभी थोड़ा समय हुआ जब कि उन्होंने यह स्पष्ट रीतिसे कह दिया है कि भारतवर्षको अंग्रेज़ी राज्यसे बिलकुल स्वतंत्र कर देना चाहिए। वह एक अद्वितीय आत्मिक शक्ति रखनेवाले अंग्रेज़ हैं। उनकी दृष्टिमें सफ़ेद और काले चमड़ेमें कोई अन्तर नहीं। उनका विचार है कि अंग्रेज़ी उपनिवेशोंमें भारतीयोंके साथ दूसरे देशोंके उपनिवेशोंकी अपेक्षा बहुत बुरा

व्यवहार होता है। वह अपनी जाति और देशवासियोंके इस अन्याय और कठोरताको बहुत बड़ा पाप समझते हैं और उनको इस योग्य नहीं समझते कि भारतवर्षपर राज्य करें। वह अंग्रेज़ हैं, उनको अपनी विचार दृष्टिसे अपनी सम्मति प्रगट करनेका पूरा अधिकार है। हमें अपनी लाभ और हानि सोचनी है। यदि संसारमें केवल भावोंको ही जातियोंकी रक्षाके लिये पर्याप्त समझा जाय तबतो उनका विचार ठीक है परन्तु प्रश्न यह है कि क्या और कोई पहलू भी सोचनेके योग्य है? परन्तु थोड़े और अंग्रेज़ ऐंड्रूज हों तो कठिनता आप ही दूर हो जाती है।

# स्वामी दयानन्दका उद्देश्य

(१) "वेदोंमें प्रवृत्ति न रहनेसे महाभारतका युद्ध हुआ जिससे संसारमें अंधकार फैलकर मनुष्योंकी बुद्धि भ्रममें फंस गई। इससे जिसके मनमें जैसे आया मत चलाया"।

(२) "उस मतमतान्तरके झगड़ेसे संसारमें जो जो अनिष्ट फल हुए, होते हैं और होंगे उनको पक्षपात रहित विद्वान जानते हैं"।

(३) "जबतक मनुष्य जातिमें परस्पर मिथ्या मतान्तरका विरोध न छूटेगा तबतक किसीको भी आनन्द न होगा"।

(४) "मतमतान्तरके परस्परके झगड़ोंको मैं पसन्द नहीं करता क्योंकि इन मतवालोंने अपने मतोंका प्रचार कर मनुष्यों-को फंसाके परस्पर शत्रु बना रक्खा है"।

(५) "इस बातको काट सर्वसत्यका प्रचारकर सबको एक ही मतमें करा, द्वेष छुड़ा परस्परमें दृढ़ प्रीतियुक्त करा सबसे सबको सुख लाभ पहुंचानेके लिए मेरा प्रयत्न और अभि-प्राय है"।

इन वाक्योंमें स्वामी दयानन्दके उद्देश्यकी झांकी पाई जाती है। सत्यार्थ प्रकाश खंडन और मंडनसे भरा है। जब उन्हें असत्य सिद्धान्तोंका खंडन करना पड़ा तो आवश्यक था कि इनको

प्रतियोगितापर वह इस बातका प्रकाश करते कि वह सत्य किसे समझते थे। इसलिए दूसरे सब सिद्धान्तोंके मुकाबिले-पर उन्होंने अपने सिद्धान्तोंको प्रकाशित किया। परन्तु आर्य-समाजके नियम बनाते हुए स्वामीजीने सिद्धान्तोंको आगे लानेसे सर्वथा परहेज किया। यहांतक कि वेदोंके बारेमें भी जिस विषय पर सत्यार्थ प्रकाश आदिमें इतना स्पष्ट बल दिया गया है; वह केवल इतना ही कहते हैं कि वे सत्य विद्याओंकी पुस्तक है, उनका पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना परम धर्म है। न केवल यह बादके बनाए हुए दस नियमोंमें ऐसा है प्रत्युत पहिले निश्चित किए २६ नियमोंमें भी सिद्धान्तको आगे नहीं किया गया। पहिले नियमोंमें नियम और उपनियम मिले हुए हैं जिनको बादमें २ विभाग करके अलग २ कर दिया गया है।

इससे स्पष्ट मालूम होता है कि आरम्भसे ही स्वामीजी सिद्धान्तोंके ऊपर अपने मन्दिरकी आधार शिला न रखना चाहते थे। वह जानते थे कि सिद्धान्तोंका आधार बहुत तंग होता है। उसपर सार्वभौम धर्म स्थिर नहीं किया जा सकता। इनपर तो अलग २ झोंपड़ियां ही बनाई जा सकती हैं जिनकी संख्या आगे हो अनगिनत हो चुकी थी और जिसको स्वामीजी जड़ोंसे उखाड़ना चाहते थे।

यद्यपि स्वामीजीने बड़े बलसे अपनी पुस्तकों द्वारा, अपने व्याख्यानों द्वारा अपने मन्तव्योंका प्रचार किया और अपने चर्चको स्थिर करनेके लिये नियम वा उपनियम बनाए परन्तु उनके

हृदयका क्या अभिप्राय था इन वाक्योंमें अधिक स्पष्ट पाया जाता है और इसमें कोई सन्देह भी नहीं हो सकता कि यदि कोई आदमी मनुष्य जातिका उपकार करना अर्थात् मनुष्यकी शारीरिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति कराना अपना आदर्श बनाता है तो उसे मनुष्यजातिकी बीमारीको पहिले पहचानना और फिर उसका इलाज बताना आवश्यक है।

स्वामी दयानन्द मनुष्य संसारके लिए एक डाक्टर पैदा हुये। उन्होंने मनुष्योंको परस्परकी घृणा और दुःखको देखा और वह उन प्रबल विशेष परिणामोंपर पंहुचे जो कि क्रमशः ऊपरके वाक्योंमें बताये गये हैं। हम एक एकको लेकर परीक्षा कर सकते हैं।

(१) उनमें सबसे पहला तो यह है कि पहिले कोई मत या सम्प्रदाय न केवल धर्म था। वेदोंको छोड़ देनेसे लोग धर्म भूल गये हैं और महाभारतके युद्धके बाद ऐसा अज्ञान फैला कि लोग भ्रमजालमें फंस गए और कई मनुष्योंने अपने २ सम्प्रदाय वा मतकी बुनियाद डाली और लोगोंको इसमें फंसाकर अपना चेला बनाना प्रारम्भ किया। संसारके इतिहासमें यह एक बड़ी गहरी सचाई है, भिन्न २ जातियां अवश्य थीं भिन्न २ Tribes (मनुष्योंके समुदाय या जातियां) वर्तमान थी इन सबको अपने २ रस्म और रिवाज, और साहित्य या धर्मकी पुस्तक थी और इन सबके एक दूसरेके साथ मेलजोलके सबन्ध भी थे। एक दूसरे की बातें सीखते और ग्रहण करते थे परन्तु यह कभी नहीं हुआ

कि एक विशेष व्यक्तिके नामके साथ कुछ साधारण सचाइयों-को जोड़कर और उसे जालके तौरपर एक सम्प्रदायका नाम देकर दूसरोंको उसमें फंसानेका यत्न किया जावे। प्रिवेलेटा-इजिंग मत ( दूसरेको अपनेमें सम्मिलित कर लेना ) एक विचित्र और व्यर्थ सी शक्ति दुनियांमें पैदा हो गई है जिसको तोड़ना इस समय असम्भव दिखाई देता है क्योंकि मनुष्योंकी आबादी-के बड़े बड़े हिस्से इन जालोंमें फंसे हैं और इन जालोंके अन्दर और छोटे छोटे सैकड़ों हजारों जाल बन चुके हैं। फंसे हुये लोग इनको इतना पसन्द करते हैं कि वे इनसे निकलना ही नहीं चाहते। यह एक ऐसा रहस्य है जिसका कि समझमें आना कठिन है। इस शक्तिका विकास भी विचित्र ढंगसे हुआ है। इस देशमें दार्शनिकोंके कई मत थे। हरएक मतवाला गुरु अपने अपने चेलोंको अपने सिद्धान्त सिखाता था और इधर उधर फिरा करता था। गौतम बुद्धने भी इसी तरह अपना सिद्धान्त कि संसारमें कर्मका नियम अटल है सिखाना शुरू किया। उसने एक राज्यका त्याग किया था इसलिए इसके चेलोंकी संख्या बहुत जल्दी बढ़ने लगी और इसके नामसे संप्रदाय बना कर इसकी फ़िलासफ़ीके ढंगका प्रचार शुरू किया गया। बुद्धके चेले निर्वाण प्राप्त करनेके लिए त्याग करना आवश्यक सम-झते थे। उसमें असंख्य भिक्षुक बन गये और उन्होंने प्रचार ही अपना काम बना लिया। यद्यपि इनका प्रचार बुद्धके नामपर होता था परन्तु वह सदाचारके जीवनसे दूसरोंके जीवनको बुद्ध-का आदर्श रखकर सुधारना चाहते थे।

सीरिया आदिमें ये लोग पहुंच चुके थे जब मसीहका जन्म हुआ। मसीहको सत्यके प्रचार करनेके बदलेमें सूलीपर चढ़ाया गया। उसके चेलोंने बौद्धोंका अनुकरण किया और मसीहके नामपर नये सिद्धान्त बनाकर यहूदी विचारोंका संसारमें प्रचार करना प्रारम्भ किया। यहूदी बाइबिल हजारों सालोंसे चली आती थी परन्तु वे किसी औरको अपने कुटुम्बमें सम्मिलित न करते थे। मसीहमतके प्रचारकोंने न केवल प्रचारसे प्रत्युत विवाहोंमें कन्यायें देकर और राजबलका प्रयोग करके और शक्ति प्राप्तकर लेनेपर तलवारके बलसे लोगोंको अपने मतमें प्रविष्ट किया। मुहम्मद साहिबने मसीही सम्प्रदायकी अवस्था और उन्नतिको देख लिया था। इन्होंने अरबमें ऐसी पोलिटिकल शक्ति पैदा की जिसने मत और राज्य दोनों एकत्रित कर दिये और देशीय और मत-सम्बन्धी विजयको ही बड़ा उद्देश्य ठहरा लिया। इन मतोंकी नकल ऐसी हुई कि अब जरा जरासे सिद्धान्तोंके विरोधपर प्रत्येक बड़े सम्प्रदायकी सैकड़ों शाखायें पाई जाती हैं। वे सब मत, सम्प्रदाय और शाखायें हरएक अपने आपको सचाईपर मानती हैं और दूसरोंको भूलपर। सत्य बात यह है कि ये सब ही भूलमें हैं। इसलिये स्वामीजी कहते हैं कि सब मत मतान्तर अन्धकारका परिणाम है। जब मनुष्योंकी बुद्धि भ्रममें फंस गई तो जैसा किसीके मनमें आया वैसा मत चलाया।

( २ ) यदि ये मतमतान्तर समझ लेते कि दुनियांमें हरएक

मनुष्यकी बुद्धि भिन्न दर्ज़े रखती है और प्रत्येक आदमीको जो बचपनमें शिक्षा दी जाय वह ठीक मालूम होती है तो शायद इनसे बहुत झगड़े और कलह पैदा न होते। परन्तु मूर्ख लोगोंका बड़ा चिह्न यह होता है कि अपनेसे विरुद्ध सम्मति रखनेवालोंको देखनेसे ही उनके दिलमें घृणाका भाव भड़क उठता है। इस घृणाके भावका परिणाम यह हुआ कि संसारमें धर्म और ईश्वरके नामपर वे अत्याचार और रक्तपात किये गये कि उनका वर्णन ही दिलको चूर चूर कर देता है। शताब्दियोंतक ईसाई और मुसलमान आपसमें "जहाद" करते रहे। इन जहादोंमें लाखों ईश्वरके पुत्र विध्वंस हुए। इस्लामकी सेनाओंने भिन्न देशों-पर आक्रमण कर जिन्हें वे काफ़िर समझते थे क्या क्या अत्याचार नहीं किये? ईसाई मतके दो बड़े विभागों रोमन कैथलिक चर्च और प्रोटेस्टेंट चर्चने वर्णनातीत कठोरताएं एक दूसरेके विरुद्ध कीं। फ्रांसमें एक रातको लाखों प्रोटेस्टेंट बिस्तरों पर सोये हुये कतल कर दिये गए। जीवित लोगोंको सैकड़ों हजारोंकी संख्यामें जला दिया गया। जर्मनीके ३० वर्षवाले युद्धके मध्यमें शहरोंको आग लगाकर खाकमें मिला दिया गया और धर्मके नामपर जङ्ग करनेवाले सिपाही दूध पीते बच्चोंको भालेसे ऐसे निशाना लगा कर हंसते थे जिससे कि भाला बच्चेको चीरता हुआ मांकी छातीसे पार निकल जाय।

कहा जा सकता है कि अब तो वह समय गुज़र गया, अब तो सहनशीलता पायी जाती है। निस्सन्देह प्रत्यक्षमें तो

ऐसा मालूम होता है परन्तु वास्तविक बात यह है कि योरपकी ईसाई जातियोंकी सत्ता बहुत प्रबल है और दूसरे मत निर्बल होकर ऐसे दबे हुए हैं कि वे सिर नहीं उठा सकते अन्यथा दिलके हाल देखकर अनुमान लगाया जा सकता है कि इस समय भी मनुष्योंमें जितना घृणाका भाव एक दूसरेके विरुद्ध पाया जाता है उसमें आधासे अधिक परिमाण साम्प्रदायिक मत-भेदके आधारपर है। इसलिए स्वामीजीने कहा कि इस सांप्रदायिक विवादसे जो अनिष्ठ फल हुए, होते हैं वा होंगे उनको निष्पक्ष विद्वान अच्छी तरह जानते हैं।

( ३ ) इसलिए संसारमें सुख और आनन्द फैलानेका एक उपाय है और वह यह है कि मतमतान्तरोंके पारस्परिक विरोध-को दूर किया जाय जिस तरह जातियोंके अन्दर रुपएवालोंने दूसरोंका धन लूटनेके बहानेसे उस देश-प्रेमके भावको फैला रक्खा है जिसके अर्थ दूसरोंके विरुद्ध घृणा करनी है।

इसी प्रकार धार्मिक पुरोहितों और पादरियोंने साधारण लोगोंके अन्दर विशेष प्रकारके सिद्धान्तोंका प्रचार करते हुए दूसरे धर्मोंके विरुद्ध घृणा फैला रक्खी है। दोनों भाव विशेष समुदायोंपर अपनी स्वार्थपरता और लाभपर अश्रित हैं इसलिए स्वामीजी नम्बर ४ में कहते हैं कि मैं इन झगड़ोंको पसन्द नहीं करता, मतवालोंने मनुष्योंको फंसाकर एक दूसरेका शत्रु बना रक्खा है। मनुष्य समाजको समष्टि रूपसे देखकर स्वामीजी परिणामपर पहुंचते हैं और जो कोई बुद्धिमान मनुष्यकी

भलाई चाहनेके उद्देश्यसे इनकी वर्त्तमान अवस्थापर विचार करेगा इस परिणामपर पहुंचे बिना नहीं रह सकता यदि वह धड़ाबन्दीके विचारको दिलसे एक बार निकाल दे। विरुद्ध इसके यदि इस विचारसे चलें कि मेरा मत तो अवश्य ठीक है क्योंकि यह मेरा है और मेरे मां बाप कैसे भूलपर हो सकते थे या मेरे सिखानेवाले तो सबसे अधिक बुद्धिमान थे। यह मार्ग स्पष्ट दलबन्दीकी ओर ले जाता है और मनुष्योंके मनोंमें कभी एकयता नहीं हो सकती।

(५) इसलिए स्वामीजी कहते हैं कि मैं लोगोंके दिलोंसे द्वेष निकालना चाहता हूं और इसके स्थानपर आपसमें प्रीति डालना चाहता हूं। इस ऊपर वर्णन किये हुए भ्रमको दूर करके और एक अटल सत्यको फैला कर मेरा असली उद्देश्य और प्रयत्न एक यही है कि सब लोग शेष सबके लिए लाभकारी हो और एक दूसरेको सुख पहुंचाते हुए संसारमें आनन्दको बढ़ावें।

वह सत्य सब मतों और सम्प्रदायोंके अन्दर सम्मिलित अवयव पाया जाता है और वह 'धर्म' है।

'धर्म' के अर्थ वे सब विधियां हैं जो कि मनुष्यकी वैयक्तिक-सामाजिक और सामूहिक जीवनको उन्नति देनेके लिए आवश्यक हैं। ये धर्मकी आज्ञायें सारे धर्मोंके अन्दर यदि वही नहीं तो एक सी अवश्य हैं। उनके साथ जब किसी व्यक्तिके नाम या किसी व्यक्तिगत सिद्धान्तको जोड़ दिया जाता है तो

वह मत बन जाता है। वेदोंकी शिक्षा केवल धर्मकी शिक्षा है। इनमें किसी व्यक्तिके सिद्धान्तों या विश्वासोंका वर्णन नहीं। वेदमें मनुष्यकी शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नतिके साधन और उनका उपदेश है। इस बातमें वेद-धर्म सब दूसरे सम्प्रदायोंसे निराला है इसलिये स्वामीजीका उद्देश्य यह हैं कि केवल वेद-धर्मकी सत्यताका प्रचार संसारको इन मतोंकी दासतासे मुक्त करा सकता है।

चूं कि अधिक मात्रा असत्यकी इन मतोंमें पायी जाती है। इसलिये असत्यको संसारसे मिटाना भी स्वामीजीके उद्देश्यका बड़ा हिस्सा है।

मैं यही उद्देश्य आर्यसमाजका समझता हूं। वेदधर्मके प्रचारके अर्थ मैं केवल वेदोंका स्वाध्याय या वेदमन्त्रोंके अर्थोंमें गहरी खोज नहीं समझता। वेदमन्त्रोंका जितना हमें ज्ञान है उनसे धर्मका पर्याप्त ज्ञान हमें हो जाता है। मैं धर्म-प्रचारके अर्थ यह समझता हूं कि इन वेदमन्त्रोंको हम अपने जीवनमें धारण करें। जो व्यक्ति अपने जीवनमें अभय पदवीको सन्निविष्ठ कर लेता है मैं उसे अधिक पक्का आर्य समझता हूं अपेक्षा उसके जो दिनरात डरसे कांपता रहता है और प्रातः प्रतिदिन दो घंटे वेदमन्त्रोंका पाठ करता है और अपने जीवनको कोरेका कोरा रखता है। जब हमारा गृहस्थ त्यागनेका समय है उस समय मैं उसे आर्य समझता हूं जो दुनियांपर लात मारकर धर्म-प्रचारसे आत्मिकबल प्राप्त करनेमें लग जाता है न कि वह जो कि

दुनियांके लोभ, मोह और आराममें अधिक ग्रस्त होता जाता है और घरमें आरामसे बैठा हुआ नदी जाकर स्नान करता और खाली समय होनेके कारण बहुत समयतक आंखें बन्द करके सन्ध्या करता है।

## वैदिक जीवन बनानाही वैदिक-धर्मका प्रचार है

दूसरे मत केवल सिद्धान्तोंपर विश्वास कराते हैं, केवल ऊपरसे भजन करवाते हैं परन्तु जीवनके अन्दर सच्चा परिवर्त्तन पैदा करना वैदिक धर्मका काम है। इसी एक उपायसे हम झूठे मतमतान्तरोंको मिटा सकते हैं। यदि उनके जीवनमें वैदिक नियमोंपर अधिक आचरण होगा तो हमारे मुकाबिले पर वे अधिक फैलते जावेंगे। आत्मिकबल ही विजय पाता है।

---

## आर्यसमाजका उद्देश्य

ब्रह्माण्डके अन्दर हम एक विचित्र नियम पाते हैं। वह नियम 'संघर्ष' का है जिससे संसारमें हमारे सामने अद्भुत् दृश्य दिखाई देते हैं। जब भिन्न भिन्न चीजोंकी परस्पर रगड़ होती हैं तो नई आग और चमक पैदा हो जाती है। केवल दिया-सलाई रगड़नेसे ऐसा नहीं होता प्रत्युत पत्थरोंकी रगड़से भी आग और चमक पैदा होती है। पुराने समयके लोग ऐसे ही आग जलाते थे। जैसे दो लकड़ी या पत्थरके टुकड़ोंको रगड़नेसे आग पैदा होती है वैसे ही जब दो जातियोंमें संघ-

र्षण होता है तब भी एक विशेष आग पैदा होती है। जब दो गंवारोंमें आपसमें गालीगलौज होता है तो परिणाम यह होता है कि कुल्हाड़े चल जाते हैं। बात असलमें यह है कि एकके दिलमें भाव पैदा होता है दूसरा इसका सामना करना चाहता है परिणाम यह होता है कि एक या दूसरेकी जान जाती है। इसी प्रकार समुदायोंके अन्दर भी विचारोंकी रगड़ हुआ करती है। गत दिनोंमें पञ्जाबमें यही हुआ था। गवर्नमेंटने प्रयत्न किया कि लोगोंके विचारोंको बलात् दबा दिया जाय इसलिए इसने 'रौलट ऐक्ट' पास किया किन्तु लोगोंने इसके विरुद्ध प्रबल आन्दोलन किया। परिणाम—

## "मार्शल ला"

हुआ और इसके बाद जो कुछ हुआ वह सबको मालूम है मैं यह बातें गवर्नमेंटके विरुद्ध या पक्षमें नहीं कहता। मैं केवल यह प्रकट करना चाहता हूं कि जब दो भिन्न २ विचारोंमें संघर्ष होता है तो परिणाम क्या होता है। ऐसा ही जातियोंकी अवस्थामें होता है। आप अमरीकाके इतिहासको लें। गत शताब्दीके मध्यमें अमरीकामें एक युद्ध हुआ था। इसके मूलमें एक विचार था। कुछ लोग विचार करते थे कि गुलामोंको स्वतन्त्र कर देना चाहिये किन्तु भूमिपति इसका विरोध करते थे। इन दोनों विचारोंके संघर्षका परिणाम यह हुआ कि घरेलू लड़ाई हुई जिसमें सहस्रों और लाखों मनुष्य बलि चढ़े। अन्तमें अमरीकासे

गुलामी बिलकुल दूर हो गई। जिस प्रधानके समयमें यह युद्ध हुआ था वह सबसे मुख्य प्रधान समझा जाता है। आप वर्तमान युद्धकी ओर ध्यान करें, इससे कितना बड़ा विनाश हुआ है। कोई जाति नहीं जो इसके प्रभावसे बची हो।

## गत युद्धका असली कारण

इस युद्धका कारण भी एक अभिलाषा थी। जर्मनीके कैसरने विचार किया कि सब महाप्रदेश इङ्गलैंड और फ्रांसके अधिकारमें हैं जर्मनीके विस्तारके लिए आवश्यक है कि दूसरी शक्तियोंके साथ मुकाबिला करे। कैसरकी इस भावनाका दूसरे राज्योंने परस्पर संगठित होकर मुकाबिला किया। परिणाम यह हुआ कि पांच सालतक रक्तपात जारी रहा। इसी तरह जब दो भिन्न धर्म या विचारोंका परस्पर मेल होता है तब भी यही परिणाम होता है। जब बौद्धधर्म यहां फैला हुआ था तो हिन्दुओंमें प्रतियोगिताका विचार पैदा हुआ। परिणाम यह हुआ कि शंकराचार्य्य और कुमारिलने पैदा होकर धर्मकी रक्षा की। इसी तरह जब इस्लाम यहां आया तो गुरु नानक आदिकी हलचल उत्पन्न हुई और जब वर्तमान समयमें पश्चिमी सभ्यता और ईसाई धर्म साइंस और पोलिटिकल शक्तिके साथ यहां आया तो यहां भी एक भाव पैदा हुआ जिसका निदर्शक स्वामी दयानन्द था। इसका परिणाम यह हुआ कि यहां भी हलचल प्रारम्भ हुई।

## स्वामीजीका उद्देश्य

सब लोग कहते हैं कि स्वामीजीका विशेष उद्देश्य था।

उन्होंने आर्यसमाजके नियम बनाये, विशेष संस्कार नियत किये, विशेष सिद्धान्तोंका प्रचार किया परन्तु मैं इन सबको साधन समझता हूं। यद्यपि यह आवश्यक है किन्तु इन सबके अतिरिक्त और इनकी जड़में स्वामी दयानन्दके हृदयमें एक विशेष भाव काम कर रहा था और वह यही भाव था जो कुमारिलके हृदयमें एक राजाकी कन्याकी यह पुकार सुनकर पैदा हुआ था कि "जाऊं, क्या करूं, वैदिक धर्मकी रक्षा कौन करेगा" ( किं करोमि क्व गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति )—

बस! स्वामीजीका यही उद्देश्य था कि वह वेदोंकी रक्षा और उनका प्रचार करें। स्वामीजीने इस उद्देश्यको पूरा करनेके लिये कई उपाय प्रयुक्त किये। पुस्तकें लिखीं, व्याख्यान दिये, शास्त्रार्थ किये और पाठशालाएं खोलीं। यह सब साधन थे। कई कहते हैं कि क्योंकि उन्होंने शिवरात्रिकी रात चूहेको शिव-पर चढ़ते देखा था इस लिये मूर्त्ति पूजाका खण्डन उनका उद्देश्य था, परन्तु यह मिथ्या है। स्वामीजीके दिलमें उस समय जो भाव पैदा हुआ था वह यह है कि यह शिव वास्तविक शिव नहीं इसलिये असली शिवकी ढूंढ़ लगाई जाय। इसलिये उन्होंने वेदोंको पढ़नेका निश्चय किया और बादमें उनके प्रचार और उसकी रक्षाके लिये कटिबद्ध हो गये।

## आर्य्यसमाजका भविष्य आपके हाथमें है

अब प्रश्न पैदा होता है कि आर्य्यसमाजका भविष्य क्या होगा? एक समय मैं लाहौर सेन्ट्रल जेलकी कोठरीमें बन्द था।

मुझे फांसीकी आज्ञा मिल चुकी थी। महाशय कृष्ण मुझसे मिलने गये। उन्होंने उस समय भी यही प्रश्न किया था और अब भी उन्होंने मेरे व्याख्यानका यही विषय रखा है। मैंने उस समय जो उत्तर दिया था अब भी मेरा उत्तर वही है। वह यह कि अगर आप आर्य्यसमाजको जीवित रखना चाहते हैं या फैलाना चाहते हैं तो इसके अन्दर 'जीवन' पैदा करें। आर्य्यसमाजका भविष्य आपके हाथमें है जैसा आप इसे बनायेंगे वैसा ही यह बनेगा। आर्य्यसमाजने कई काम किये जिनमें 'एक समाज सुधार' का काम है। इसके प्रचारने बालविवाह बन्द करा दिया है। अब सनातनधर्मी भी इसके पक्षमें और अनुकूल हैं। आर्यसमाजने विधवाविवाहका प्रचार किया अब सनातनधर्मी भी यही कर रहे हैं। सिद्धान्तोंके विषयमें भी अब बहुत कम झगड़ा बाकी है। यह आर्यसमाजकी कृतकार्यता है कि आज लोग साधारणतः मूर्त्तिपूजा नहीं करते परन्तु इससे—

## आर्यसमाजका काम समाप्त नहीं हुआ

इसी प्रकार स्कूल और न्याय संस्थायें भी आर्यसमाजके उद्देश्य नहीं। ये मकानपर जानेकी सीढ़ियां हैं। सीढ़ीके साथ चिमट रहना बुद्धिमत्ता नहीं। हमें तो आर्यसमाजके उद्देश्यको पूरा करना है। यदि आप यह समझते हों कि आर्यसमाज एक सत्य सभा है और सचाई अवश्य कृतकार्य होती है तो मेरी आपसे सहमति नहीं। सचाईको फैलानेके लिए भी प्रयत्न करना पड़ता है। बुद्ध धर्म यहां चिरकालतक रहा। मुझे ईसाई धर्ममें

कोई विशेष सचाई दृष्टि गोचर नहीं होती किन्तु यह सब कुछ होते हुए भी इस धर्मका अब राज्य है। इस्लाम भी चिरकाल-तक शासन करता रहा। बस! स्पष्ट है कि असत्यकी भी जीत होती रहती है यह सब प्रयत्नका परिणाम है। आपको अपनी सचाई अपने जीवनके द्वारा सिद्ध करनी चाहिए। बलिदान करके सचाईका मूल्य देना होगा। सदा सोनेका ही मूल्य दिया जाता है मुलम्मेका नहीं। अपने अन्दर जीवन पैदा करो।

दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूं कि हम देखते हैं कि जब शरीरमें हमारी जीवनी शक्ति होती है तो वह पदार्थोंको पचा करके अपने जीवनको स्थिर रख सकती है। इस अवस्थामें भी ऐसा ही होता है जो अपने चारों ओरकी अवस्थाओंको अप-नेमें लीन कर लेती है और इनके बहावमें बह नहीं जाती वे ही संस्थाएं कृतकार्य हुआ करती हैं। बस! आर्यसमाजमें भी इसकी आवश्यकता होनी आवश्यक है और यह इसी अवस्थामें अपनी शक्तिको बढ़ा सकता है जब इसमें जीवनशक्ति और आत्मिक बल हो। आप दूसरी संस्थाओंको देखें जब कोई हिन्दू ईसाई हो जाता है तो उसमें एक भारी परिवर्तन पैदा हो जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह एक ऐसी सोसाइटीमें जाता है जिसमें पचानेकी शक्ति विद्यमान है। किन्तु शोक! प्रायः आर्य-समाजी ऐसे नहीं होते। जिस सोसाइटीको पहले बापको और फिर बेटेको अपनेमें मिलानेके लिये प्रयत्न करना पड़े वह कैसे सफल हो सकती है? जबतक दूसरोंको अपने अन्दर

पचानेकी शक्ति आर्यसमाजमें न होगी यह जीवित नहीं रह सकती। 'जो चीज़ नमककी खानमें जाय वह नमक हो जाती है' वाला सिद्धान्त होना चाहिए। स्वामीजीके अन्दर भावना एक अग्निके समान थी जो सब बुरे भावोंको नाश कर देती थी। हममें भी यही शक्ति होनी चाहिए। यदि हमने आर्य-समाजमें आकर यह शक्ति प्राप्त नहीं की तो हमें समझ लेना चाहिये कि आर्यसमाजका भविष्य अन्धकारमें है आज देशमें विचित्र लहर चल रही है जिधर आत्मिकबल और बलिदान होंगे वहीं कृतकार्यता होगी। यदि आर्यसमाजमें बलिदान होने वाली आत्माएं हों तो आर्यसमाज फैल सकता है। यदि हमने अपनी सभाको खोकर स्वराज्य भी प्राप्त किया तो कोई लाभ नहीं। आर्यसमाज प्राचीन सभ्यताका रक्षक है। इसके लिए आपको आत्मत्याग करना होगा। अग्निकी शक्ति उसी समय मालूम होती है जब वह ईंधनको जलाये। अरबोंमें यह आग पैदा हुई, सब विद्वेषी जल गये और इस्लामकी एक प्रबल शक्ति बन गयी। आर्यसमाजका भविष्य तभी सुन्दर हो सकता है जब आप अपने तंग दिलीको बलिदान करके ऐसी शक्ति पैदा करें कि देश और धर्मकी सेवा कर सकें। शोक है आर्यसमाज दलबन्दीके कारण निर्बल हो रहा है। हिन्दू मुसलमान आपसमें मिल गये हैं क्या आर्य आर्य परस्पर भी नहीं मिल सकते? हमारा धर्म है कि ५० सालके बाद गृहस्थीमें न रहें किन्तु शोक है कि हम ऐसा नहीं करते।

आर्यसमाज जीवित रहेगा या नहीं इसका उत्तर यही है कि यदि आप इसके लिये आत्मबलिदान करेंगे, गृहस्थके बाद बानप्रस्थ होंगे और वैदिक धर्मको फैलानेका निश्चय करेंगे तो यह जीवित रहेगा अन्यथा नहीं। आर्यसमाजमें ऐसे नवयुवक होने चाहिए जो पतंगेकी तरह इसपर अनुरागी हों। वे इसके जानको हाथमें लेकर वैदिक धर्मका देशदेशान्तरोंमें प्रचार करें तब आर्यसमाज जीवित रहेगा और भारी शक्ति बनेगा अन्यथा इसका भविष्य अन्धकारमय होगा।

## गुरुकुलका भविष्य

वनके अन्दर एक वृक्ष खड़ा है उसकी छाया भी है उसके साथ फल भी लगा है उसकी लकड़ी भी सुदृढ़ है एक यात्री थका हुआ धूपमें चलकर आता है उसकी छायाके नीचे आराम करके चला जाता है। भूखा आदमी उसका फल तोड़कर खा लेता है उसकी भूख दूर हो जाती है। लकड़ी इकट्ठी करनेवाला आता है उसकी सूखी टहनियां काट लेता है और ले जाता है। इस वृक्षका लाभ हरएककी दृष्टिमें अलग अलग है।

गुरुकुलकी दशा भी ऐसी ही है। भिन्न २ भाव रखनेवाले लोग इसे भिन्न २ दृष्टिसे देखते हैं और इससे फलकी आशा रखते हैं। आर्यसमाजके भक्त और वेदोंपर दृढ़ विश्वास रखनेवाले पुरुषोंने जब इसके लिये धन एकत्रित किया और अपनी सन्तान-को वहां भेजा तो वे यही समझते थे कि गुरुकुलसे वेदोंके विद्वान और आर्यसमाजके प्रचारक पैदा होंगे।

एक साधारण बुद्धि रखनेवाला मनुष्य ब्रह्मचारियोंके वेश और उनके तपका जीवन देखकर उसपर ही मस्त हो जाता है। मेरी तरहके कई मनुष्य जो वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर परीक्षाओंकी कठिनता, अधिकता और अंग्रेजी भाषाके द्वारा सारी शिक्षा होनेसे बहुत खिन्न थे उन्होंने समझा कि गुरुकुल एक सच्चे जातीय विश्वविद्यालयका आदर्श है जो कि नवयुवकोंको अपनी भाषाके द्वारा सब विद्याओंको देकर उच्च कोटिके विद्वान पैदा करेगा। इस तरहकी भिन्न २ आशायें गुरुकुलसे लोगोंके दिलोमें लगी हैं। गुरुकुलके लिये यह परीक्षाका समय है।

एक बात तो स्पस्ट है कि मनुष्योंकी बनाई हुई कोई संस्था एकदम ऐसी पूर्ण तो नहीं हो सकती जैसी कि प्रकृतिने वृक्षको बनाया है। क्या पता प्रकृतिको इसी वृक्षकी वर्त्तमान रचना करनेमें कितने यज्ञ करने पड़े हैं। मनुष्य तो बहुत तुच्छ शक्ति रखता है तो भी दिन दिन अपने काममें अशुद्धियां और निर्बलतायें देखता है और उनसे लाभ उठाकर उनको दूर करनेका यत्न करता है। कई शताब्दियोंसे विश्वविद्यालयकी शिक्षा-प्रणाली प्रचलित है। प्रतिवर्ष इसमें परिवर्तन और संशोधन होते रहते है। कुछ वर्ष हुए मेरा यूनिवर्सिटीसे सम्बन्ध नहीं रहा। इतने समयके अन्दर उपाधि परीक्षाकी प्रणालीमें इतना परिवर्तन हो गया है कि मैं पहचान नहीं सकता कि यह वही प्रणाली है या उसीसे निकली है जोकि मेरे पढ़ने या पढ़ानेके समयमें प्रचलित थी। यूनिवर्सिटीके सम्बन्धमें, सिंडिकेट और सीनेट वर्षभर लगातार इस काममें ही रहती है।

गुरुकुलकी स्थापनाके समयसे ही स्वामीजीकी लिखी हुई पाठ्यप्रणालीपर भरोसा नहीं किया गया। इसके साथ कई योजनायें की गईं ताकि इसे वर्त्तमान अवस्थाओंके अनुकूल किया जाय। यदि केवल वह पाठ्यप्रणाली ही रहती तो इसके कार्य्यका क्षेत्र सर्वथा नियमित और सीमाबद्ध हो जाता और उसमें आगामी परिवर्तन आदिकी कोई आवश्यकता न थी किन्तु ब्रह्मचारियोंके माता पिता शायद स्वीकार न करते कि उनके बच्चों को वर्त्तमान युगकी विद्याओंकी उन्नतिसे कोई संपर्क नहीं हो। गुरुकुलकी पाठविधिमें वर्त्तमान विद्याओंकी योजना करके साधारण लोगोंकी अभिलाषाओंके सामने सिर झुकाया गया और गुरुकुलको आर्थिक दृष्टिसे पुराने ढंगपर चलाना पसन्द न किया गया।

आवश्यक और उचित था कि ब्रह्मचारीके मातापितासे व्यय आदिके लिये कोई फीस न ली जाय और इस उद्देश्यके लिये जनतासे दानके ढङ्गसे धन इकट्ठा किया जाता। वर्तमान सुशिक्षित प्रोफेसरोंके वेतनोंपर रुपये खर्च करनेके स्थानमें केवल पण्डित लोग ही रखे जाते। इस अवस्थामें रहकर विद्यार्थी अपना उद्देश्य स्पष्ट देखते कि उन्हें अपने जीवनमें केवल धर्मके सुधार और उद्धारका ही काम करना है और न उनके मां बाप उनसे कुछ और आशा रख सकते थे। मातापितासे पर्याप्त राशिमें मासिक फीस लेकर और आधुनिक विद्याओंकी पढ़ाईका बोझ डालकर यह अनिवार्य बात हो गई है कि एक

तो उन्हें वर्त्तमान समयके अनुसार विद्वान बनानेके लिये उनकी शिक्षा-प्रणालीपर कभी कभी क्या लगातार विचार होता रहे और इनके मातापिताओंकी आशाएं पूरी करनेके उद्देश्यसे उनकी सांसारिक कृतकार्य्यताओंको भी लक्ष्यमें रखा जाय।

अतः दो भिन्न प्रकारकी इच्छाओंको एक जगहपर पूरा करनेका प्रयत्न किया गया है इसलिये इस समय दोनों प्रकारके लोगोंको थोड़ी बहुत निराशाका होना आवश्यक है। इसके अर्थ दूसरे शब्दोंमें ये हैं कि गुरुकुलके अधिकारयोंको सर्वदा अवस्थाओंके अनुसार परिवर्तन करनेपर तय्यार रहना चाहिये।

जहांतक मैं सोचता हूं मुझे विचार आता है कि गुरुकुलके निचले भागको कांगड़ीसे देहली ( इन्द्रप्रस्थ ) परिवर्तन करनेमें भूल की गई। चाहिये यह था कि गुरुकुलका कालेज विभाग देहली भेज दिया जाता। उस समय यह अवसर था कि गुरुकुलके दो उद्देश्योंका अलग अलग प्रबन्ध किया जाता। जहांतक स्कूलकी शिक्षा है और इसके बाद जो ब्रह्मचारी स्वामीजीके उद्देश्यके अनुसार केवल वेदका स्वाध्याय ही अपना उद्देश्य बना लेवें उनका आर्यसिद्धान्त (Theology) अर्थात् धर्म विषय ज्ञानकी उपाधिका पूर्ण प्रबन्ध करके सबको कांगड़ीमें ही रखा जाता किन्तु शेष कालेजका भाग जिसमें जीवविद्या (Biology) रसायन शास्त्र ( Chemistry), विज्ञान ( Science) आदिकी उच्च शिक्षाका प्रबन्ध हो। देहली जैसे स्थानमें परिवर्त्तन कर

देना चाहिये और इस विभागमें दूसरे गुरुकुलोंसे आये हुए ब्रह्मचारी और दूसरे विद्यार्थी भी लिये जावें जिनका विवाह न हुआ हो। इस विभागको वर्त्तमान आवश्यकताओंके अनुसार एक जातीय विश्व-विद्यालय बना दिया जाय क्योंकि गुरुकुलके स्कूल (विद्यालय विभाग) से निकले हुए ब्रह्मचारी पर्याप्त संख्यामें नहीं हो सकते इसलिये साधारण विद्यार्थियोंको प्रविष्ट करनेमें कोई हानि नहीं। इस विश्वविद्यालयके लिये विशेष ढङ्गपर नये सिरेसे फण्ड एकत्रित करनेका प्रयत्न होना चाहिये। वैयक्तिक रूपमें मेरी सम्मति तो यह है कि यदि इसे राजपूताने के मध्य चित्तौड़ या नैपाल जैसी हिन्दू रियासतमें स्थापित किया जाय तो बहुत ही उत्तम है। मैंने देहली इसलिये लिखा है कि वहांपर फण्ड और गुरुकुलका विभाग पहले हीसे विद्यमान है। इसके स्थानमें कि देहलीके गुरुकुल समाजवाले इन्ट्रेस (अधिकारी परीक्षा) नियत करके अपना धन और समय उधर लगावें उन्हें गुरुकुलके जातीय विश्वविद्यालय बनानेके काममें लगाया जाय। स्कूलका काम उनको सौंप देना चाहिये जिनका यह काम चला आता है। आक्षेप होगा कि उच्च विभाग देहली होनेसे उसका मान कांगड़ीके हिस्सेसे बढ़ जायगा, मैं ऐसा नहीं समझता। प्रथम तो वेदकी डिग्री (Divinity) का प्रबन्ध कांगड़ीमें रहेगा, पण्डित सब वहां होंगे दूसरा वार्षिकोत्सव एक ही स्थानपर अर्थात् कांगड़ीमें होना उचित है। देहलीके सब विद्यार्थी वहां जा सकते हैं। मैं यूनिवर्सिटीकी पाठ्यप्रणालीमें

बड़ी सुगमता समझता हूं। इसके दो विभाग होने चाहिये। एक तो पेशों ( कलाओं ) के अलग २ कालेज एक कालेज आयुर्वेदका जिसके साथ हस्पताल भी होना .चाहिये। दूसरा इञ्जनीयरिङ्गका अर्थात् मैकेनिकल ( यान्त्रिक ), इलैक्ट्रिकल (वैद्युतिक केमिकल ( रासायनिक ) आदि शाखायें पढ़ानेका कालिज होना चाहिये जिनमेंसे हर एकके लिये लाखों रुपयेकी आवश्यकता होगी। दूसरा विभाग 'लिटरैरी' जिसमें इतिहास ( History) दर्शन ( Philosophy ), अर्थ शास्त्र (Economics ) साहित्य पढ़ाय जाय। इसके लिये केवल इतना पर्याप्त है कि प्रत्येकके विद्यार्थी केवल एकही विषयको चार सालमें समाप्त करें और उसके किसी विषयपर अपनी भाषामें अन्वेषण करके एक नई पुस्तक लिखें जिसकी योग्यतापर उसे पहले, दूसरे और तीसरे दर्जेकी उपाधि मिलनी चाहिये। प्रोफेसर अपने अपने विषयपर व्याख्यान भी दें और विद्यार्थियोंकी साधारण तया सहायता भी करें जिससे वे अपने विषयमें पूर्णता प्राप्त कर सकें।

आरम्भमें दोनों लिटरैरी और आयुर्वेदिक विभाग जारी किया जा सकता है इञ्जनीयरिङ्गकी भिन्न शाखायें ज्यों २ बढ़ता जायगा खोली जा सकती है और उन्नति पा सकती हैं।